इकाई 20 व्यापार नीति

संरचना

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 व्यापार नीति : अवधारणा

20.3 1991 से पूर्व व्यापार नीति

20.4 1991 से आगे व्यापार नीति : लक्षण एवं मुद्दे

- 20.4.1 भारत एवं विश्व व्यापार की परिवर्तित होती प्रवृत्ति
- 20.4.2 सेवाओं में व्यापार
- 20.4.3 व्यापार एवं बौद्धिक संपदा
- 20.4.4 कृषि एवं जीविकोपार्जन
- 20.4.5 क्षेत्रीय व्यापार
- 20.4.6 व्यापार-श्रम एवं पर्यावरण संबंधी मानदंड

20.5 निर्यात-आयात नीति 2009-14

- 20.5.1 उद्देश्य
- 20.5.2 वृहत् लक्षण
- 20.5.3 मूल्यांकन

20.6 सारांश

20.7 अभ्यास प्रश्न

20.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

20.9 शब्दावली

20.10 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

20.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- 1991 के आर्थिक सुधारों से पूर्व व्यापार नीति के लक्षणों की विवेचना कर सकेंगे;
- 1991 के आर्थिक सुधारों के पश्चात् व्यापार के वृहत् लक्षणों का वर्णन कर सकेंगे;
- विश्व व्यापार की परिवर्तित होती प्रकृति के अंतर्गत विदेशी व्यापार से संबंधित उभरते हुए मुद्दों की पहचान कर सकेंगे;
- आई.टी. से संबंधित गतिविधियों में भारत की सफलता में व्यापार नीति की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे;
- निर्यात–आयात नीति 2009–14 का मूल्यांकन कर सकेंगे।

20.1 प्रस्तावना

इकाई 6 एवं 7 में हमने सीखा है कि भारत तीव्र गति से वैश्वीकरण की ओर जा रहा है। विश्व की अर्थव्यवस्थाओं की पारस्परिक निर्भरता में कई गुना वृद्धि हो गई है। वस्तुओं एवं सेवाओं का व्यापार प्रमुख रूप से महत्त्वपूर्ण हो गया है। जी.डी.पी. में वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यात का अंश 14 प्रतिशत से बढ़कर 2010–11 में 22 प्रतिशत हो गया है तथा अब भारत को एफ.डी.आई. के लिए महत्त्वपूर्ण देश के रूप में देखा जाता है। उभरते हुए बाजारों एवं विशेष रूप से एशिया के बाजारों के प्रति आर्थिक शक्ति में परिवर्तन के साथ विश्व अर्थव्यवस्था में होने वाले परिवर्तन अंतर्निहित रूप से भारत के पक्ष में हैं। ऐसी स्थिति में व्यापार नीति की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो जाती है। अतः इस इकाई में हम व्यापार नीति एवं उसके आर्थिक सुधारों से पूर्व एवं उसके बाद की अवधि में लक्षणों की विवेचना करेंगे। हम सेवाओं में व्यापार, व्यापार एवं बौद्धिक संपदा अधिकार, कृषि एवं जीविकोपार्जन तथा क्षेत्रीय व्यापार जैसे व्यापार से संबंधित महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डालेंगे। व्यापार नीति 2009–14 के लक्षणों एवं उसके मूल्यांकन की भी विवेचना की जाएगी। आइए, हम व्यापार नीति की अवधारणा से बातचीत शुरू करते हैं।

20.2 व्यापार नीति : अवधारणा

निर्यात एवं आयात दोनों को सम्मिलित करने वाले अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से संबंधित अपनाई गई नीति व्यापार नीति होती है। व्यापार नीति का विस्तृत विवरण देश में अपनाई गई विस्तृत व्यापार रणनीति पर निर्भर करता है। इसी क्रम में व्यापार रणनीति नियोजनकर्ताओं द्वारा अपनाई गई विकास की विस्तृत रणनीति पर निर्भर करती है। भारत में विस्तृत रूप से दो प्रकार की विकास रणनीतियाँ अपनाई गई हैं : अंतः उन्मुखी एवं बाह्योन्मुखी।

1991 से पूर्व व्यापार पर नियंत्रण भारत की व्यापार नीति का महत्त्वपूर्ण लक्षण रहा है। व्यापार पर नियंत्रण दो प्रकार के उपायों में विभाजित हैं – तटकर उपाय एवं गैर-तटकर उपाय। तटकर उपाय आयातों एवं निर्यातों पर लगाए जाने वाले शुल्क एवं करों से संबंधित होते हैं। गैर-तटकर उपाए वे होते हैं जो व्यापार पर अभ्यंश या अन्य परिमाणात्मक प्रतिबंधों संबंधित से होते हैं। उदाहरण के लिए, खाद्य पदार्थों के आयात में प्रमापों का निर्धारण भी एक प्रकार का व्यापार पर गैर-तटकर अवरोध है। किसी वस्तु का आयात करने के लिए लाइसेंस प्राप्त करने की आवश्यकता भी व्यापार पर गैर-तटकर अवरोध है।

1991 को विभाजन वर्ष मानते हुए भारत की व्यापार नीति को दो वृहत् अवधियों में विभाजित किया जा सकता है:

- 1991 से पूर्व व्यापार नीति
- 1991 से आगे व्यापार नीति

1991 से पूर्व अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, विशेष रूप से आयातों पर बहुत अधिक नियंत्रण थे। 1991 में बड़े उदारीकरण उपायों के पश्चात् अनेक नियंत्रण हटा दिए गए हैं। विश्व के अधिकांश देशों के समान भारत विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) का एक सदस्य है। अतः इसकी व्यापार नीति डब्ल्यू.टी.ओ. के नियमों एवं नियमनों के अनुरूप होने

की आवश्यकता होती है। डब्ल्यू.टी.ओ. का उद्देश्य कुछ विशेष परिस्थितियों में छोड़कर व्यापार पर परिमाणात्मक प्रतिबंधों को समाप्त करना एवं तटकरों में कमी करना होता है।

डब्ल्यू.टी.ओ. नियमों के अंतर्गत आयातों पर परिमाणात्मक प्रतिबंध केवल कुछ विशेष परिस्थितियों में किए जाने होते हैं। जैसे यह अंदेशा हो कि निर्यातक देश अपने उत्पादों का राशिपातन (Dumping) करेंगे। राशिपातन होने में माना जाता है कि उत्पाद लागत से कम कीमत पर बेचे जा रहे हैं। किंतु लागतें निर्धारित करने में बड़ी समस्याएँ होती हैं। अतः राशिपातन की पहचान करने में समस्या होती है। लागत-कीमतें निर्यातों में अपेक्षाकृत कम हो सकती है। इसके अतिरिक्त, अतिरेक क्षमता की स्थिति में फर्में अतिरेक क्षमता का उपयोग करने के लिए लागत की अपेक्षा कम कीमतों पर बेच सकती हैं। परिणामस्वरूप वास्तव में यह निर्धारित करना कठिन है कि क्या राशिपातन हो रहा है? सामान्य व्यवहार लागत अनुमानों पर विश्वास करना नहीं बल्कि व्यापार की संख्याओं पर आधारित होता है। यदि किसी विशिष्ट देश के आयातों में तीव्र गति से एवं अचानक वृद्धि होती है, तो यह संदेह किया जाता है कि इसमें राशिपातन निहित है। तथापि, कुल मिलाकर, व्यापार पर परिमाणात्मक प्रतिबंधों से हटकर परिवर्तन हुए हैं।

20.3 1991 से पूर्व व्यापार नीति

स्वतंत्रता के समय से लेकर 1980 के दशक के मध्य तक तथा अधिक स्पष्ट रूप से 1991 तक भारतीय व्यापार नीति आत्मनिर्भरता की नीति के आधार पर प्राप्त की जाती थी। नियोजित विकास का उद्देश्य एक ऐसे औद्योगिक समूह की स्थापना करना होता था जो कि वस्त्र जैसी अंतिम वस्तुओं के उत्पादन में ही नहीं बल्कि मशीनों एवं उपकरणों का भी उत्पादन करने में सक्षम हो। इसका उद्देश्य केवल उपभोक्ता वस्तु उद्योग स्थापित करना ही नहीं बल्कि पूँजीगत वस्तुओं का उत्पादन करने वाले उद्योग स्थापित करना था।

व्यापार नीति का उद्देश्य आत्मनिर्भर उत्पादन संरचना के लक्ष्य को प्राप्त करने पर आधारित था। आयातों पर बहुत अधिक तटकर होते थे। अधिक तटकरों के भावना देश में उत्पादित वस्तुओं की अपेक्षा आयातित वस्तुओं को अधिक महँगी बनाने के द्वारा घरेलू उत्पादन को प्रोत्साहित करना था। इसे ही आयात-प्रतिस्थापन का नाम दिया जाता है। इसमें केवल आयात शुल्क ही नहीं बल्कि आयात करने से पूर्व विभिन्न अनुमति प्राप्त करनी होती थी। उदाहरण के लिए, एक कंप्यूटर के लिए कई अनुमति एवं लाइसेंस की आवश्यकता पड़ती थी। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए उसके महत्त्व के मूल्यांकन के आधार पर केंद्रीय सरकार उसके आयात का निर्णय लेगी।

आयात प्रतिस्थापन का दूसरा पक्ष निर्यातों को हतोत्साहित करना था निर्यातों को हतोत्साहित करने की कोई सक्रिय नीति नहीं थी किंतु आयात तट करों का अभिप्राय यह होता था कि आयात प्रतिस्थापन उत्पादन में विनियोग से होने वाले लाभ निर्यातों के लिए उत्पादन में विनियोग से लाभ की अपेक्षा अधिक हों। भारत में उत्पादन लागतों को बहुत अधिक न मानते हुए कीमत अधिक होने पर लाभ भी अपेक्षाकृत अधिक होंगे। दूसरी ओर निर्यातों में भारतीय उत्पादकों को अन्य देशों के उत्पादकों से प्रतिस्पर्धा करनी होगी तथा निर्यातकों को अधिक लाभ नहीं होंगे। इस प्रकार अधिक आयात-

शुल्क की नीति ने निर्यातों में विनियोग को हतोत्साहित करने का काम किया। जैसा कि उसमें कहा गया था कि अधिक आयात शुल्क बाजार कीमत संकेतों को निर्यातों से हटाकर आयात प्रतिस्थापन की ओर विकृत कर देते थे।

आर्थिक नीतियों की रचना मात्र हवाई बातों से नहीं होती है बल्कि वे अनिवार्य रूप से कुछ ऐसे सिद्धांतों पर आधारित होती है कि अर्थव्यवस्था किस प्रकार कार्य करती है। आयातों पर इस प्रकार के नियंत्रण के पीछे कौन-सा सिद्धांत था – यह सिद्धांत भारत नियोजित विकास से प्रारंभ होता है जो द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1961–65) के निर्माण के एक अंग के रूप में था। यह सिद्धांत 'निर्यात निराशावाद' (Export Pessimism) के नाम से जाना जाता है।

निर्यात निराशावाद

औपनिवेशीय उत्तर स्थिति के बाद 1950 के दशक में यह माना जाता था कि अल्पविकसित देशों की निर्यात आय अत्यधिक सीमितताओं पर निर्भर होती थी। विश्व विनिर्माण औद्योगीकृत या विकसित देशों में संकेंद्रित था जब कि अल्पविकसित देश अधिकांशतः कृषीय प्रकृति के थे। विश्व व्यापार की संरचना इस विभाजन को प्रतिबिंबित करती थी। अल्पविकसित देश कॉफी, चाय, कच्ची कपास या खनिज जैसे कच्चे माल एवं प्राथमिक वस्तुएँ निर्यात करते थे। विकसित देश विनिर्मित उत्पाद निर्यात करते थे। विश्व व्यापार औद्योगीकृत देशों के विनिर्मित उत्पादों का कृषीय एवं प्राथमिक वस्तुओं के उत्पादक देशों की कृषीय वस्तुओं एवं प्राथमिक वस्तुओं से विनिमय था।

विनिर्मित वस्तुएँ प्रायः बड़ी कंपनियों द्वारा उत्पादित की जाती हैं। एकाधिकारी बाजार स्थिति होने के कारण कंपनियाँ अपने उत्पादों की कीमत निर्धारित कर सकती थीं अर्थात् वे कीमत निर्माता थी। कृषीय वस्तुएँ बहुत बड़ी संख्या में छोटे उत्पादकों द्वारा उत्पादित की जाती हैं। इन छोटे उत्पादकों के पास बाजार शक्ति नहीं होती है तथा अपने उत्पादों की कीमतें निर्धारित नहीं कर सकते हैं अर्थात् वे कीमत स्वीकार करने वाले होते हैं। दूसरी ओर विकसित देशों से कृषीय वस्तुओं के क्रेता बहुत कम संख्या में होते हैं। इस स्थिति को हम क्रेता-एकाधिकार की स्थिति कहते हैं जिसमें किसी उत्पाद के कुछ या केवल एक ही क्रेता होता है। वह क्रेता अथवा कुछ क्रेता उस प्राथमिक वस्तु-विशेष के कीमत-निर्माता हो सकते हैं। मान लीजिए, यदि कॉफी की कीमतों को कम रखा जाता है अतः प्राथमिक वस्तुओं के लाखों उत्पादकों को प्रतिफल भी कम प्राप्त होगा।

हमें इस चित्र को पूरा करने के लिए विश्व व्यापार की संरचना के एक तीसरे आयाम को जोड़ने की आवश्यकता है। वह महत्त्वपूर्ण खनिज संसाधनों का औद्योगीकृत अर्थव्यवस्थाओं के बहुराष्ट्रीय निगमों (MNCs), कभी-कभी राष्ट्र पार निगमों (Trans-national Corporations TNCs) का नियंत्रण होता है। बहु-राष्ट्रीय निगमों के एक से अधिक देशों में कार्यकलाप होते थे तथा वे विकासशील देशों के अधिकांश खनिजों एवं कच्चा माल संसाधनों का नियंत्रण करते थे। पश्चिमी एशिया में मुख्य रूप से उत्पादित कच्चे तेल का एक प्रतिष्ठित उदाहरण है किंतु इसका नियंत्रण अंग्रेजी–अमरीकी बड़ी कंपनियों द्वारा किया जाता था। कच्चे तेल के इस नियंत्रण का परिणाम यह था कि तेल की बड़ी कंपनियाँ कच्चे तेल की कीमत कम रखती थीं तथा पूर्तिकर्ता देशों की सरकारों को थोड़ी धनराशि रॉयल्टी के रूप में भुगतान करती थी।

तब विश्व व्यापार में अल्पविकसित देशों की भूमिका कृषि वस्तुएँ, खनिज एवं विभिन्न गैर-निर्मित वस्तुओं के निर्यात की होती थी। एक प्रतिस्पर्धी बाजार में कृषीय वस्तुओं की माँग सापेक्षिक रूप में कम होने के कारण उनके उत्पादन में वृद्धि होने से कीमतों के गिर जाने की संभावना होती है। अतः कृषीय वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि होने पर भी निर्यात–आय में वृद्धि की संभावना नहीं होती क्योंकि कीमतें गिर सकती हैं।

मान लीजिए, कॉफी के किसानों द्वारा अधिक उत्पादक विधियों को अपनाने से उत्पादकता में वृद्धि होती है। क्या बढ़ी हुई उत्पादकता का लाभ उत्पादकों को प्राप्त नहीं होगा? यह तभी होगा यदि केवल कुछ उत्पादकों (प्रगतिशील किसान) ने अकेले बेहतर तकनीक अपनाई जबकि अधिकांश किसानों ने नहीं अपनाया। तब प्रगतिशील किसानों को अपेक्षाकृत अधिक उत्पादकता का लाभ प्राप्त होगा। उनकी उत्पादन लागतें कम हो जाएँगी। कीमत स्थिर होने पर प्रगतिशील किसानों की अधिक उत्पादकता उन्हें अपेक्षाकृत अधिक निर्यात आय प्रदान करेगी। किंतु किसानों द्वारा उत्पादकता में सुधार एक समूह या देश के भी बाहर फैल सकता है। यदि कॉफी के सभी उत्पादक सुधरी हुई तकनीक को अपनाते हैं तब एकाधिकारी क्रेता विक्रेताओं में प्रतिस्पर्धा की स्थिति का उपयोग कीमतों को नीचे लाने में कर सकता है। ऐसी स्थिति में बढ़ी हुई उत्पादकता का प्रीमियम उपभोक्ताओं को हस्तांतरित भी कर सकते हैं अथवा नहीं भी। दूसरी ओर, औद्योगीकृत देशों के बहु-राष्ट्रीय निगम उत्पादकों को बढ़ी हुई उत्पादकता के लाभ हस्तांतरित करना नहीं होता है। उनकी एकाधिकारी स्थिति विनिर्मित वस्तुओं की कीमतें निर्धारित करने की उन्हें अनुमति प्रदान करती है।

उपरोक्त दो प्रस्तावों का अभिप्राय यह है कि अल्पविकसित देश की व्यापार की शर्तें (अर्थात् एक देश से बेची जाने वाली वस्तुओं एवं खरीदी जाने वाली वस्तुओं की कीमतों के अनुपात या प्राथमिक वस्तु कीमतों के विनिर्मित वस्तु कीमतों से अनुपात) खराब हो जाएँगी। संक्षेप में, यह शक्तिशाली विश्लेषण था जो प्रबिश–सिंगर परिकल्पना के नाम से जाना जाता है। 'निर्यात निराशावाद' की यही समझ थी कि एक अल्पविकसित देश निर्यात बाजार में कितनी धनराशि अर्जित कर सकता है, उसकी एक दृढ़ सीमा होती थी।

निर्यात निराशावाद का अन्य पक्ष आयात राशन व्यवस्था थी। चूँकि भारत को स्वयं के उद्योग विकसित करने की आवश्यकता थी, अतः उसे प्रमुख रूप से उद्योगों के लिए उपकरण एवं मशीनें आयात करने के लिए दुर्लभ विदेशी विनिमय की आवश्यकता थी। खाद्यान्न दुर्लभता की स्थिति में खाद्यान्न का भी आयात करना पड़ सकता है। ऐसी स्थिति में सीमित विदेशी विनिमय आयों के राशन व्यवस्था की आवश्यकता थी। सापेक्षिक कीमतों के आधार पर आयात की जाने वाली अथवा आयात न की जाने वाली वस्तुओं के विषय में निर्णय सरकार करती थी, बाजार के खिलाड़ी नहीं। सभी आर्थिक रूप से लाभकारी होने वाली आयातित वस्तुओं में से सरकार सीमित विदेशी विनिमय के सबसे महत्त्वपूर्ण उपयोगों के विषय में निर्णय करेगी।

अतः स्वतंत्रता के पश्चात् प्रारंभ के दशकों में भारतीय व्यापार नीति के लक्षण निर्यात निराशावाद एवं आयात नियंत्रण थे। इसमें 1980 के दशक के मध्य से परिवर्तन प्रारंभ हो गया तथा 1991 के उदारीकरण के साथ इसका परित्याग कर दिया गया।

20.4 1991 से आगे व्यापर नीति : लक्षण एवं मुद्दे

1991 की व्यापार नीति सुधार उस बाह्य ऋण संकट की परिणाम थी जिसका सरकार ने सामना किया। उस समय सरकार के पास देय बाह्य ऋण भुगतानों को पूरा करने के लिए पर्याप्त विदेशी विनिमय नहीं था। अपनी अंतर्राष्ट्रीय ऋण देनदारी का भुगतान न कर सकने से बचाव के लिए सरकार अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से ऋण प्राप्त करने के उद्देश्य से संपर्क करने के लिए बाध्य थी।

आई.एम.एफ. सामान्यतः तथा शरारतपूर्ण रूप से संबंधित शर्तों के साथ ऋण प्रदान करती है। ये शर्तें सुधारों से संबंधित होती हैं जिन्हें उधार लेने वाली सरकार को लागू करने का वायदा करने की आवश्यकता होती है। भारत सरकार के लिए आवश्यक बड़े सुधार व्यापार नीति का उदारीकरण करने, मूल रूप से आयातों पर नियंत्रण हटाने तथा उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं को यह निर्णय करने कि किन वस्तुओं का आयात एवं किन वस्तुओं का निर्यात किया जाए इत्यादि से संबंधित थे। यद्यपि आई.एम.एफ. से ऋण के लिए व्यापार नीति में परिवर्तन करना एक शर्त थी किंतु उत्तर के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या यह परिवर्तन भारत के स्वयं के विकास के लिए आवश्यक या लाभकारी था। यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर हम बाद में आएँगे। किंतु इस बिंदु पर यह विचार-विमर्श करेंगे कि भारत की व्यापार नीति में परिवर्तन क्यों हुआ? क्या अंतर्राष्ट्रीय अनुभव में कुछ ऐसी बात थी जो व्यापार नीति के 'निर्यात निराशावाद' दृष्टिकोण के विरुद्ध हुआ?

1960 के दशक में दक्षिण कोरिया एवं ताइवान अल्प विकसित देशों से बहुत भिन्न नहीं थे। वे अधिकांशतः कृषीय अर्थव्यवस्थाएँ थीं तथा उनके निर्यात चावल या कसावा जैसी कृषीय वस्तुएँ थीं। किंतु 1960 के दशक के अंत एवं 1970 के दशकों में वे हांगकांग एवं सिंगापुर के साथ, जिन्हें एक साथ 'नवीन औद्योगीकरण करने वाली अर्थव्यवस्थाएँ (NIEs)' कहा जाता है तथा बाद में दक्षिण–पूर्व एशियाई देश (विशेष रूप से थाईलैंड एवं मलेशिया) ने अपने निर्यातों की संरचना में परिवर्तन करना प्रारंभ कर दिया। वे अधिकांशतः कृषीय वस्तुओं के निर्यात से हल्की विनिर्मित वस्तुओं के निर्यातकों के रूप में तीव्र गति से बढ़ गए। जैसे – सिले-सिलाए वस्त्र, जूते, कोमल खिलौने एवं प्लास्टिक की वस्तुओं जैसी हल्की विनिर्मित वस्तुएँ। ये हल्की विनिर्मित वस्तुएँ श्रम-प्रधान होती थीं। चूँकि इन एन.आई.ई. में मजदूरी दर यूरोप, उत्तरी–अमेरिका या जापान की अपेक्षा कम थी अतः ये देश स्वयं को श्रम-प्रधान वस्तुओं के विनिर्माता एवं निर्यातक के रूप में स्थापित करने में सक्षम हुए।

1970 के दशक के अंत एवं 1980 के दशक के प्रारंभ में चीन की सुधार प्रक्रिया के पश्चात् चीन की अर्थव्यवस्था ने भी श्रम-प्रधान विनिर्मित वस्तुओं में मजबूत उपस्थिति स्थापित करने की प्रक्रिया में प्रवेश किया। वास्तव में, इस क्षेत्र में चीन की प्रगति को इस तथ्य से सहायता प्राप्त हुई कि एन.आई.ई. में मजदूरियों में वृद्धि प्रारंभ की गई जिसने वहाँ के पूर्तिकर्ताओं को उत्पादन के श्रम प्रधान भाग को चीन में परिवर्तित कर दिया।

हम बाद में उस वैश्विक उत्पादन एवं व्यापार प्रणाली की प्रकृति के विषय में विचार-विमर्श करने के लिए वापस आएँगे जो सृजित की जा रही है।

इस बिंदु पर यह ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि एन.आई.ई., दक्षिण पूर्व एशियाई अर्थव्यवस्थाएँ एवं सबसे अधिक चीन का अपने प्रमुख भागीदारों यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका के साथ विशाल व्यापार अतिरेक होना प्रारंभ हो गया। यह 'निर्यात निराशावाद' दृष्टिकोण का एक महत्त्वपूर्ण एवं निर्णायक खंडन था। जिस निर्यात निराशावाद ने मत व्यक्त किया था कि अल्पविकसित देशों के निर्यातों की दृढ़ सीमाएँ हैं। वस्तुतः जो परिवर्तन हुआ वह यह है कि ये अर्थव्यवस्थाएँ कृषीय एवं अन्य प्राथमिक वस्तुओं के निर्यातक होने से परिवर्तित होकर श्रम प्रधान हल्की निर्मित वस्तुओं के निर्यातक हो गईं।

भारत एन.आई.ई., एस.ई. एशिया एवं चीन के समान बदलाव क्यों नहीं कर सका, जिसने एशिया को विश्व का विनिर्माण केंद्र बना दिया। किसी भी स्थिति में इन देशों के अनुभव ने निर्यात निराशावाद को समाप्त कर दिया तथा एक नई अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नीति की आवश्यकता को रेखांकित किया। इसने एक ऐसी व्यापार नीति को आवश्यक किया जो श्रम-प्रधान विनिर्मित वस्तुओं के निर्माण में अब विकासशील अर्थव्यवस्था नामक पूर्व अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओं के तुलनात्मक लाभ पर ध्यान दे। पूर्वगामी निर्यात निराशावाद दृष्टिकोण कृषीय वस्तुओं के उत्पादन में भूमि अतिरेक देशों के परंपरागत तुलनात्मक लाभ पर आधारित था। नवीन दृष्टिकोण ने एक ऐसी व्यापार नीति को आवश्यक बना दिया जो विकासशील देशों के केवल भूमि प्रधान कृषि में ही नहीं बल्कि श्रम-प्रधान विनिर्मित वस्तुओं के तुलनात्मक लाभ पर आधारित हो।

इसे निरंतर करने के पूर्व उन दशाओं का अवलोकन करना उपयोगी होगा जिन्होंने विश्व विनिर्माण व्यापार में इस प्रकार के तीव्रगति से परिवर्तन को उत्पन्न किया। प्रथम, कई विकासशील देशों में विनिर्माण एवं प्रबंधन क्षमताओं का विकास हुआ। अपने स्वयं का विकास करने के प्रयास में, वह चाहे आयात प्रतिस्थापन में हो अथवा नहीं, एशियाई देशों ने श्रमिकों एवं प्रबंधकों में पर्याप्त निपुणता विकसित कर ली। विश्व बाजार में हल्के विनिर्माण के इस विस्तार के लिए उच्च स्तर की मूल शिक्षा आवश्यक थी।

भारत की व्यापार नीति में एक बड़ी बात कुछ प्रतिबंधों की अनिश्चित प्रकृति है। उदाहरण के लिए, कच्ची कपास के एक मौसम में निर्यात करने की अनुमति है किंतु अगले मौसम में नहीं। या जब फसल बहुत अच्छी होती है तो चावल निर्यात की अनुमति हो सकती है तथा अनाज के संचय की समस्याएँ हो सकती हैं। वर्तमान वर्ष (2012) में भारत चावल का सबसे बड़े निर्यातक के रूप में उभर कर आया है किंतु इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अगले वर्ष भी चावल निर्यात करने में निरंतर सक्षम होगा। इस प्रकार की अनिश्चित व्यापार नीति प्रस्तुत करने में विभिन्न घरेलू दबाव कार्य करते हैं। किंतु एक सतत् व्यापार ढाँचा बनाने के लिए यह उपयुक्त नहीं है।

बोध प्रश्न 1

1) 'निर्यात निराशावाद' से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

2) 1991 से पूर्व की अवधि में निर्यात निराशावाद एवं आयात नियंत्रण के अभिप्रायों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

3) 1980 एवं 1990 के दशकों में एन.आई.ई. में प्रचलित वैश्विक उत्पादन एवं व्यापार प्रणाली की प्रकृति की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

20.4.1 भारत एवं विश्व व्यापार की परिवर्तित होती प्रवृत्ति

किंतु प्रश्न यह उठता है कि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की फर्में किस प्रकार विकसित अर्थव्यवस्थाओं के बाजारों में प्रवेश का प्रबंधन करती हैं? क्या उन्हें स्थानीय प्रतिस्पर्धा पर विजय प्राप्त होती है? जिस प्रकार से सिले-सिलाए वस्त्रों एवं जूतों जैसी वस्तुओं का विदेशी व्यापार विकसित हुआ, वह बाजार में बिक्री के माध्यम से नहीं हुआ जैसा कि चावल या चीनी के संबंध में हुआ। इसके बजाय विकासशील देशों की फर्मों ने विकसित देशों के क्रेताओं से ठेका किया। गैप, नाइक, अडीडास जैसी फर्मों ने विनिर्माण कार्य के विकासशील देशों की फर्मों से उप-ठेके किए। अतः विकासशील देशों की फर्मों को स्वतंत्र रूप से बाजारों की खोज नहीं करनी पड़ी। विकसित देशों की फर्मों ने डिजाइन, ब्रॉंड सृजन करने एवं विपणन की प्रमुख योग्यताओं को अपने पास रखा तथा पूर्वी एवं दक्षिण पूर्व एशिया की फर्मों को उप-ठेके प्रदान किए।

इसका अर्थ व्यापार की प्रकृति में अत्यधिक परिवर्तन से होता है। संपूर्ण वस्तुओं (कृषि वस्तुओं बनाम विनिर्मित वस्तुओं) में व्यापार से अब व्यापार उत्पाद बनाने में निहित विशिष्ट कार्यों में एक हो गया है। उदाहरण के लिए, सिले-सिलाए वस्त्रों के मामले में एव अपेक्षाकृत कम निपुणता वाले कार्य – अर्थात् 'काटो, बनाओ एवं छँटाई करो' (Cut-Make-Trim – CMT) का कार्य, विकासशील अर्थव्यवस्था की फर्मों में किया जाता है जो संभवतः अनेक देशों से आयातित आगतों की सहायता से किया जाता है। जबकि डिजाइन, ब्रॉंड का सृजन करने एवं विपणन का कार्य विकसित अर्थव्यवस्था की फर्मों द्वारा किया जाता है। इस प्रक्रिया में मध्यवर्ती उत्पाद एवं उनके मूल्य विदेशी व्यापार में एक से अधिक बार प्रवेश करते हैं – जोड़ने वाले देश द्वारा आयातित मध्यवर्ती वस्तुओं के रूप में तथा उसके पश्चात् पुनः उसी देश द्वारा निर्यातित अंतिम उत्पाद की कीमत के अंग के रूप में होते हैं।

इस प्रकार के कार्य के बँटवारे पर आधारित व्यापार का बहुत अच्छा उदाहरण भारत में हीरे एवं रत्नों का है। भारत बहुत बड़ी मात्रा में हीरा एवं रत्नों को निर्यात करता है किंतु निर्यात की मात्रा भ्रमात्मक है। चूँकि कच्चा माल अर्थात् खुरदुरा माल पूर्ण रूप से भारत द्वारा आयात किया जाता है। ये खुरदरे माल उसके पश्चात् तराशे जाते हैं एवं उन पर पालिश की जाती है जिसमें इन कार्यों के लिए भारतीय श्रमिक

का उपयोग किया जता है जो बहुत श्रम-प्रधान होते हैं। भारत के व्यापार के आँकड़ों में तराशे हुए हीरों का पूर्ण मूल्य सम्मिलित होता है किंतु भारत को जो प्राप्त होता है वह मूलतः तराशने एवं पालिश करने की मजदूरी एवं इस कार्य पर लाभ होता है। उस देश में रोजगारयुक्त लाखों श्रमिकों के रूप में बहुत अधिक लाभ होता है। भारत का हीरे तराशने में 90 प्रतिशत से अधिक का अंश है। किंतु हमें यह ध्यान अवश्य देना चाहिए कि संपूर्ण क्षेत्र भारत में आधारित नहीं है। केवल कच्चे माल का ही आयात नहीं किया जाता बल्कि अधिकांश हीरे के आभूषण एवं हीरे के सेट के डिजाइन अन्य देशों में तैयार किए जाते हैं। यद्यपि अब भारतीय फर्में अंतर्राष्ट्रीय बाजार के लिए हीरे के आभूषण के न्यून एवं मध्यम कोटि के डिजाइन एवं विनिर्माण में प्रवेश कर रही हैं। तथापि, व्यापार के खुलपने ने भारत में सिले-सिलाए वस्त्रों एवं चमड़े के उत्पादों में उसी प्रकार की प्रगति उत्पन्न नहीं की? यह व्यापार नीति से आगे की बात है किंतु इसका संक्षेप में उल्लेख इस प्रकार की जा सकता है कि 2000 के प्रारंभ तक निरंतर बनी रहने वाली लघु पैमाने की इकाइयों के लिए आरक्षण की ऐतिहासिक नीति, घटिया आधारभूत ढाँचा एवं मान लिए गए बेलोच श्रम नियमन इत्यादि सभी ने श्रम प्रधान उद्योगों में पर्याप्त रोजगार प्रदान करने के लिए व्यापार नीति में परिवर्तन की भूमिका निभाने का तर्क प्रस्तुत किया।

20.4.2 सेवाओं में व्यापार

परंपरागत रूप में व्यापार का अर्थ वस्तुओं में व्यापार से होता है किंतु विनिर्माण में देखे गए कार्यों के उसी विभाजन ने सेवाओं में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को विकसित करने की अपनी भूमिका निभाई है। वास्तव में कुछ सेवाएँ उपभोक्ता को मौके पर ही दी जा सकती हैं। सफाई या खाना पकाना या बाल काटने की सेवाएँ केवल निर्धारित स्थान पर ही दी जा सकती हैं अर्थात् उन सेवाओं का व्यापार नहीं होता है। किंतु अनेक सेवाएँ विदेशी श्रमिकों द्वारा या विदेशी विनियोग द्वारा कुछ दूरी पर प्रदान की जा सकती हैं।

डब्ल्यू.टी.ओ. के अंतर्गत सेवाओं में व्यापार पर सामान्य सहमति (जी.ए.टी.एस.) सेवाओं में तीन प्रकार के व्यापार को स्वीकार करता है। एक प्रकार विदेशी कंपनियों द्वारा किसी ऐसे देश में विनियोग करना जिसमें सेवाएँ प्रदान की जानी होती हैं। दूसरा, प्रकार किसी विदेशी स्थान पर सेवा को समुद्र-पार प्रदान करना होता है। इसका एक अच्छा उदाहरण कॉल सेंटर है जो भारत के कई शहरों में उभर कर आए हैं तथा उपभोक्ताओं की पूछताछ एवं उनसे आर्डर लेने की सेवाएँ प्रदान करते हैं। तीसरे प्रकार की सेवा वह आवागमन है जिसे कानूनी शब्दावली में 'प्राकृतिक व्यक्ति' कहा जाता है जो प्रवास का अन्य शब्द है।

भारतीय फर्मों ने सेवाओं में विश्व व्यापार में मजबूत उपस्थिति बना ली है। भारतीय फर्में अनेक प्रकार के समुद्र-पार के कार्य करती हैं – वे सरल उपभोक्ता सेवा-केंद्र से लेकर लेखांकन सेवाएँ एवं विभिन्न व्यावसायिक कार्य करती हैं जिन्हें व्यवसाय प्रक्रिया बहिर्स्रोतीकरण (बी.पी.ओ.) सेवा के नाम से जाना जाता है। इन्हें आई.टी. सक्षमकृत सेवा (आई.टी.ई.) भी कहा जाता है क्योंकि वे आई.टी. एवं संचार तकनीक पर महत्त्वपूर्ण रूप से निर्भर करते हैं।

वास्तव में TCS एवं Infosys जैसी बड़ी भारतीय IT कंपनियां IT सेवाओं के वैश्विक पूर्ति के समुद्रपारीय मॉडल (of shoring model) में अग्रणी बन गयीं। उन्होंने IT सेवाओं

को उन संघटनों में विभाजित किया जो इन विभिन्न स्थानों पर किये जा सकें तथा उसके बाद उन्हें ग्राहकों को पूर्ति करने के लिए समन्वित किया जा सकें। इस प्रकार उन्होंने भली-भाँति निपुण एवं सस्ते भारतीय पेशेवरों का उपयोग लागत लाभ प्राप्त करने के लिए किया। जैसे-जैसे भारतीय फर्मों ने IT सेवाओं में अंश प्राप्त करना प्रारंभ किया, IBM एवं Accenture जैसी बड़ी अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों ने भारतीय कंपनियों के लागत लाभ को समाप्त करने के लिए अपनी इकाइयाँ स्थापित करके विरोध किया।

जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है कि भारतीय फर्मों का IT एवं IBM सेवाओं में विश्व व्यापार का पर्याप्त अंश है। इसके भारतीय निर्यातों एवं GDP में योगदान में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। इन निर्यात सेवाओं में अत्यधिक योग्य पेशेवरों एवं न्यूनतम अंग्रेजी का ज्ञान रखने वाले स्नातकों को प्रत्यक्ष रोज़गार प्राप्त है। रोज़गार की कुल मात्रा भी बहुत सीमित है जो कुल मिलाकर 5 मिलियन से अधिक नहीं है। किंतु यह IT सेवाओं की पूर्ति में भारतीय फर्मों की सफलता ही है जिन्होंने भारत को विश्व मानचित्र पर एक बढ़ती हुई शक्ति के रूप से स्थापित कर दिया है।

IT सेवाओं के व्यापार में भारत की सफलता में व्यापार नीति ने कितना योगदान किया? प्रारंभ में 1980 के दशक में भारत की व्यापार नीति ने वास्तव में इस विकास में अवरोध उत्पन्न किया क्योंकि आवश्यक कंप्यूटरों का आयात दुर्वहनीय एवं महँगा दोनों ही था। किन्तु 1991 में इन आयात-प्रतिबंधों को दूर कर देने से अत्यधिक अंतर उत्पन्न हो गया तथा उन्होंने वास्तव में सेवाओं के निर्यातों में तीव्र गति से वृद्धि की।

भारत का सेवाओं में व्यापार IT एवं ITES सेवाओं तक ही सीमित नहीं है। प्रवास के माध्यम से भी पर्याप्त योगदान हुआ हैं। प्रवास दो धाराओं में हुआ है। एक तो पेशेवर लोगों का विकसित देशों की ओर हुआ है तथा दूसरा निपुण श्रमिकों का मुख्य रूप से पश्चिम एशिया की ओर हुआ है। पहले का प्रायः प्रचार होता है। किंतु दूसरा भी श्रमिकों द्वारा धनराशि प्रेषण के रूप में महत्त्वपूर्ण होता है। वास्तव में, भारत विश्व में धनराशि प्रेषण से सर्वाधिक लाभान्वित होने वाले देशों में से एक है। लगभग $10 बिलियन प्रति वर्ष धनराशि प्रेषण ने भारत के ऋणात्मक व्यापार संतुलन को पूरा करने में सहायता की है। ऋणात्मक व्यापार संतुलन का अर्थ वस्तुओं का निर्यात, वस्तुओं के आयातों की अपेक्षा कम होने से होता है।

पर्यटन एक पुरातन प्रकार का सेवा निर्यात हैं जिसमें विदेशी पर्यटक भारत में अपनी मुद्रा व्यय करते हैं। इसमें पिछले दशक से बहुत तीव्र गति से वृद्धि होती रही है जिसमें विकसित देशों में वित्तीय संकट होने से थोड़े समय के लिए कमी आयी है। भारत एवं विकसित देशों में प्रदान की जाने वाली समान सेवाओं की बहुत भिन्न कीमतों के प्रत्युत्तर में मौके पर सेवा प्रदान करने के नये रूप उत्पन्न हो रहे हैं। सर्वोच्च स्थान पर उच्च गुणवत्तायुक्त अस्पतालों एवं सुशिक्षित चिकित्सकों के होने से भारत चिकित्सा संबंधी पर्यटन का एक नया स्थान बन गया है।

20.4.3 व्यापार एवं बौद्धिक संपदा

WTO शासन के अंतर्गत बौद्धिक संपदा अधिकारों (TRIPS या व्यापार से संबंधित बौद्धिक संपदा अधिकारों) के मामलों को सम्मिलित करने के लिए व्यापार से संबंधित बातों को कुछ विस्तृत कर दिया गया है। TRIPS के अंतर्गत सभी सदस्य देशों को एक समान बौद्धिक संपदा (IP) संरक्षण कानून बनाने की आवश्यकता होती है। पेटेंट

अधिकारों की अनुमति उत्पादों के लिए दी जानी चाहिए, केवल प्रक्रियाओं के लिए नहीं। WTO से पूर्व की आवश्यकता के अंतर्गत भारतीय IT कानून केवल प्रक्रियाओं का संरक्षण करता था, उत्पादों का नहीं। परिणामस्वरूप औषधि निर्माता कंपनियों ने उन उत्पादों के विपरीत अभियंत्री (reverse engineer) के लिए विभिन्न प्रक्रियाएँ विकसित की, जो प्रारंभ में विकसित देशों में बनायी गयी थीं। यह जानते हुए कि एक उत्पाद जैसे स्टैटिन (statin) (फाइज़र द्वारा 'लिपिटर' (Lipitor) के रूप में विकसित एवं बिक्री किया जाने वाला उत्पाद में कोलेस्ट्रॉल को कम करने का लक्षण होता है। भारतीय फर्म ने फाइज़र (Pfizer) द्वारा उपभोग की गयी प्रक्रिया से भिन्न प्रक्रिया का उपयोग करने स्टैटिन के उत्पादन का विपरीत कार्य किया। इसके परिणामस्वरूप प्राप्त औषधि रैनबैक्सी द्वारा 'Storvas' के रूप में बहुत सस्ती बेची जाती है।

इन विपरीत इंजीनियरिंग विधियों (reverse engineering methods) का उपयोग करके भारतीय कंपनियों ने पेटेंट-युक्त औषधियों के प्रजातीय रूप (Generic versions) विकसित किये। इन प्रजातीय रूपों ने अंतर्राष्ट्रीय बाजार में औषधियों की कीमतों को कम कर दिया। HIV-AIDS का इलाज करने के लिए 'retroviral drugs' उदाहरण के रूप में थे। इन औषधियों की प्रति मरीज़ प्रतिमाह लागत $100 से अधिक होती है। स्वभावतः अफ्रीका के निर्धन देशवासी (AIDS) इलाज कराने के लिए इन मँहगी औषधियों का व्यय वहन नहीं कर सकते थे। भारतीय कंपनियों ने प्रजातीय रूपों की पूर्ति प्रति व्यक्ति प्रतिमाह $100 से कम पर किया। WTO में एक लंबे वाद-विवाद के पश्चात् जनस्वास्थ्य के हित में सस्ती प्रजातीय रूपों के निर्यात के अधिकार के पक्ष में नियम बनाया गया।

भारतीय औषधि निर्माता कंपनियों ने अपने अपेक्षाकृत सस्ते प्रजातीय रूपों के माध्यम से औषधि में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में एक बहुत बड़ा परिवर्तन उत्पन्न कर दिया। किंतु TRIPS के साथ ही केवल प्रक्रियाओं को ही नहीं बल्कि उत्पादों को भी पेटेंट संरक्षण प्रदान करने के लिए भारत में IP कानून में परिवर्तन कर दिया गया। वास्तव में, अब भी प्रजातीय औषधियाँ तब क्रियाशील होती हैं जब कि औषधियों के पेटेंट समाप्त हो जाते हैं। भारतीय औषधि कंपनियों को नई औषधि खोज के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए भी बाध्य किया गया है। किंतु यह महँगा एवं समय लेने वाला क्षेत्र है जिसके लिए अत्यधिक वित्तीय सुदृढ़ता की आवश्यकता होती है। 'विपरीत इंजीनियरिंग' (reverse engineering) से ऊपर की ओर नवीन औषधि खोज में प्रवेश करने के प्रयास में कुछ भारतीय कंपनियों को बड़ी अंतर्राष्ट्रीय औषधि कंपनियों के साथ सहयोग करना पड़ा जैसे–जापान की कंपनी दाइची के साथ रैनबैक्सी।

आगे बढ़ने से पूर्व हमें इस प्रश्न का अवलोकन करना चाहिए कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संबंधों में बौद्धिक संपदा अधिकार क्यों प्रमुख हो गये हैं? जैसा कि हमने पहले खंड में देखा है कि उत्पादन में कार्यों का विभाजन हुआ है। विकसित देशों की फर्में डिजाइन, ब्राँड निर्माण एवं विपणन पर ध्यान केंद्रित करती है जबकि विनिर्माण का प्रमुख रूप से एशिया की फर्मों से बहिर्स्रोतीकरण करती हैं। उत्पादन के इस श्रम-विभाजन के अंतर्गत अतिरेक लाभ या लगान डिज़ाइन एवं विपणन कार्य में केंद्रित होते हैं जबकि विनिर्माण कार्य में मात्र स्वाभाविक या सामान्य लाभ प्राप्त होता है। इस श्रृंखला में आय के इस प्रकार के वितरण का कारण यह है कि डिज़ाइन अवस्था में एकाधिकार की स्थिति होती है क्योंकि यह कानून द्वारा संरक्षित बौद्धिक संपदा होती है। दूसरी ओर विनिर्माण कार्य एशिया में कितनी भी संख्या में फर्मों द्वारा किया

जा सकता है। इस विनिर्माण कार्य में प्रतिस्पर्धा के कारण लाभ कम होकर अपने सामान्य स्तर पर आ जाते हैं।

विकसित देश की फर्मों द्वारा डिज़ाइन एवं विकासशील देश की फर्मों द्वारा विनिर्माण के रूप में उत्पादन में यह श्रम-विभाजन वह महत्त्वपूर्ण कारण है जो इस बात की व्याख्या करता है कि विकसित देश अपने बौद्धिक संपदा अधिकारों के संरक्षण पर क्यों इतने अड़े हुए हैं। एशिया एवं लैटिन अमेरिका दोनों में पर्याप्त 'विपरीत इंजीनियरिंग क्षमताएँ (Reverse Engnineering Capabilities) होने के कारण बौद्धिक संपदा अधिकारों के संरक्षण के बिना विकसित देश की फर्मों के लगान या अतिरेक लाभ शीघ्र ही कम होने लगेंगे।

बोध प्रश्न 2

1) विकासशील अर्थव्यवस्था की फर्में किस प्रकार विकसित अर्थव्यवस्था के बाजारों में प्रवेश प्राप्त करती हैं?

.....

.....

.....

2) सेवाओं में व्यापार के विभिन्न प्रकारों की सूची बनाइए।

.....

.....

.....

3) भारत के 'सेवाओं में व्यापार की मदों' के नाम बताइए।

.....

.....

.....

4) विपरीत इंजीनियरिंग क्षमताओं (Reverse Engnineering Capabilities) से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

5) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संबंध में बौद्धिक संपदा अधिकार क्यों प्रमुख हो गये हैं?

.....

.....

.....

20.4.4 कृषि एवं जीविकोपार्जन

व्यापार नीति में अन्य विवादग्रस्त क्षेत्र कृषि का है। इस क्षेत्र में सहमति WTO मोलभाव के दोहा दौर के ढह जाने से रुक गयी है। यू.एस.ए. एवं यूरोपीय संघ (EU) दोनों ही अपने किसानों को बड़ी मात्रा में अनुदान देते हैं। इन्हें WTO शब्दावली में विभिन्न रंगों के अंतर्गत वर्गीकृत किया जाता है। लाल को व्यापार में विकृति उत्पन्न करने वाला जैसे निर्यात शुल्क या निर्यात अनुदान या हरे को किसी क्षेत्र को सामान्य समर्थन के लिए इत्यादि। किंतु इस प्रकार का सामान्य समर्थन भी अनुदान प्राप्त करने वाले किसानों का अपेक्षाकृत कम कीमतों पर निर्यात करने में सहायता करता है। इससे कृषि वस्तुओं की कीमतों में कमी हो जाती है तथा ये विकसित देशों को अपने कृषीय निर्यातों में वृद्धि करने में सक्षम बना देती है। विकसित देश कृषीय आयातों पर नियंत्रण कम करने या उन्हें समाप्त करने के लिए सहमति बनाने पर भी दबाव डालते रहे हैं।

भारत कृषीय आयातों, यहाँ तक कि निर्यातों पर भी नियंत्रणों को बनाए रखने में अड़ा रहा है। मूल रूप से तर्क यह है कि कृषि एक वस्तु का उत्पादन मात्र नहीं है बल्कि यह देश के करोड़ों लघु एवं मध्यम श्रेणी के किसानों की जीविकोपार्जन का साधन होती है। विशेष रूप से उन परिस्थितियों में जबकि न्यून निपुणता की अपेक्षा वाले विनिर्माण कार्य में नये रोज़गार में वृद्धि तीव्र गति से न हो रही हो। भारत विकसित देशों के अनुदानों से प्रोत्साहित सस्ते निर्यातों से अपनी कृषि का संरक्षण करना चाहता है।

इसी प्रकार भारत ने कृषीय वस्तुओं के स्वतंत्र निर्यात की अनुमति प्रदान नहीं की है। उच्च गुणवत्तायुक्त बासमती चावल का निर्यात स्वतंत्रतापूर्वक किया जा सकता है किंतु सामान्य चावल या गेहूँ तभी निर्यात किये जाते हैं जब FCI के गोदामों में भंडार बहुत अधिक हो जाते हैं। इससे अनिश्चित खाद्यान्न व्यापार उत्पन्न होता है। पड़ोसी देश नेपाल एवं बांग्लादेश दोनों ही अपनी जनसंख्या की भोजन व्यवस्था के लिए भारत से चावल आयात करने की अपनी क्षमता पर निर्भर करते हैं। वह इस प्रकार की अनिश्चित निर्यात नीतियों से विपरीत रूप में प्रभावित होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि नेपाल एवं बांग्लादेश से लगी हुई सीमाओं से चावल तथा उर्वरकों (जिनकी बिक्री भारत में अनुदान प्राप्त है) में भी बहुत बड़ी मात्रा में अनौपचारिक व्यापार होता है। अत्यधिक अनुदान प्राप्त सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) का चावल भी इस सीमापार अनौपचारिक व्यापार में आता है।

20.4.5 क्षेत्रीय व्यापार

क्षेत्रीय व्यापार दक्षिणी एशिया में बहुत सीमित मात्रा में होता है। यह बहुत समय तक दक्षिण एशियाई देशों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का मात्र लगभग 3 प्रतिशत रहा है तथा अब यह 5 प्रतिशत से कम है। इसकी तुलना पूर्वी-एशिया एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया के 30 प्रतिशत के क्षेत्रीय व्यापार से की जानी चाहिए। दक्षिण एशियाई सीमाओं के सभी ओर क्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि करने से संबंधित आशंकाएँ हुई हैं। इस क्षेत्र में सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होने के कारण भारत पर क्षेत्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करने का सुस्पष्ट उत्तरदायित्व है।

गुजराल सिद्धांत से प्रारंभ करते हुए क्षेत्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिए भारत सरकार ने पड़ोसी देशों को एक-पक्षीय छूट प्रदान करने के लिए अपनी मंशा की

घोषणा की। अभी हाल ही में सरकार ने बांग्लादेश से सिले-सिलाये वस्त्रों के आयातों पर सभी प्रकार के प्रतिबंधों को हटाने की घोषणा की है। इसने नेपाल के साथ भी विनियोग संरक्षण संधि किया। यह सब बातें क्षेत्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करने में सहायता करेंगी।

किंतु संरक्षणात्मक अवरोधों को कम करने के प्रयासों को अब भी दक्षिण एशियाई देशों की सापेक्षिक रूप में अंतः-उन्मुखी आर्थिक नीतियाँ संयुक्त विरोध का सामना करती हैं। प्रत्येक देश में राजनीतिक रूप से मज़बूत वे सोच हैं जो प्रतिस्पर्धी बने रहने के लिए उत्पादकता में वृद्धि के तरीके के रूप में देखने के बजाय अनुदानों को प्रतिस्पर्धाशक्ति की हानि की समस्या से निपटने के एक तरीके के रूप में उसे सामान्य नीति के रूप में समर्थन करती हैं। उदाहरण के लिए, जब भारत-श्रीलंका स्वतंत्र व्यापार समझौते के परिणामस्वरूप श्रीलंका से मसालों का आयात होने लगा, जिसने स्थानीय मसाला उत्पादों को विस्थापित कर दिया तो तुरंत ही केरल के मसाला उत्पादकों द्वारों श्रीलंका के आयातों के विरुद्ध संरक्षण की मांग की जाने लगी। यह भारत में अस्वाभाविक नहीं है। ये सोच व्यापार को खोलने से संबंधित उपायों के विरुद्ध बनी रहती हैं यदि उनके बाजारों के प्रभावित होने की संभावना होती है। अनुदानों के बाजार उन उपायों की ओर आगे बढ़ना अग्रामी तरीका है जो प्रतिस्पर्धा शक्ति में वृद्धि करेंगे।

भारत पाकिस्तान व्यापार अधिकांशतः दुबई के मार्ग से किया जाता है जो स्वाभाविक रूप से व्यापार की लागत में वृद्धि कर देता है। इस लागत वृद्धि के बावजूद दुबई होकर भारत-पाकिस्तान व्यापार लगभग $2 बिलियन प्रति वर्ष होता है। यदि व्यापार को अधिक प्रत्यक्ष रूप से किया जाता तो दोनों देशों के बीच स्पष्ट रूप से अधिक व्यापार होता। वर्तमान में भारत में आधारभूत ढाँचे के निर्माण पर अधिक जोर होने के कारण उसने पाकिस्तान से पर्याप्त मात्रा में सीमेंट का आयात किया है। यह दुबई रास्ते के बजाय भूमि मार्ग के उपयोग द्वारा सुविधाजनक हुआ है।

पाकिस्तान द्वारा अनेक रसायनों का आयात किया जाता है। किंतु इन आयातों के अतिरिक्त उन नकारात्मक मदों की लंबी सूची है जिनका आयात नहीं किया जाना होता है। इसके अंतर्गत औषधियाँ सम्मिलित हैं जिनमें प्रजातीय उत्पादन करने वाली भारतीय फर्में वर्तमान पाकिस्तान उत्पादन की अपेक्षा बहुत सस्ती होती हैं। किंतु घरेलू उत्पादन का संरक्षण करने की इच्छा रखने वाली मजबूत सोचें लंबी नकारात्मक सूची के रूप में परिणाम होती हैं।

इसके साथ ही, यह ध्यान देने योग्य है कि उन सोचों की शक्ति में वृद्धि हुई है जो व्यापार के खोले जाने का समर्थन करती हैं। भारत एवं पाकिस्तान के बीच वस्तुओं के निर्यातों से संबंधित हाल की परिस्थिति में कुछ व्यापारिक सोचों ने स्पष्ट रूप से राजनीतिक हितों के विरुद्ध काम किया है। जबकि पाकिस्तानी व्यापारी स्वाभाविक रूप से भारत में प्याज़ की कमी का लाभ उठाना चाहते थे किंतु बढ़ा हुआ निर्यात उस पाकिस्तान के राजनीतिक हितों द्वारा कुचल दिया गया जो इन निर्यात को प्रतिबंधित करना चाहते थे। इसी प्रकार जब भारतीय कपास व्यापारी कच्ची कपास के पाकिस्तान को निर्यात में वृद्धि करना चाहते थे (जहाँ बाढ़ के कारण कपास की फसल प्रभावित हो गयी थी,) तो इसका उन भारतीय कपड़ा मिल मालिकों द्वारा विरोध किया गया था जो बहुत अच्छी भारतीय फसल से लाभ उठाना चाहते थे। निर्यात

न होने की स्थिति में बहुत अच्छी कपास की फसल से कच्ची कपास की कीमतों में भारी कमी आयेगी जो कपड़ा मिल मालिकों के लिए लाभदायक होगा।

क्षेत्रीय व्यापार नीति का आधार क्या होना चाहिए? यह अत्यधिक विवाद ग्रस्त विषय है। विकास की सीढ़ी में 'विकासशील अर्थव्यवस्था', 'कम विकसित देश' एवं 'उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं' के बीच अंतर होता है। भारत एवं चीन जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं के पास LDC एवं अन्य विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षा अधिक तकनीक एवं पैमाने के लाभ हैं।

अधिकांश क्षेत्रीय स्वतंत्र व्यापार समझौते (RFTA) एक-दूसरे के बाजारों को समान पहुँच के सिद्धांत पर आधारित होते हैं। तथापि, जब देश विकास के भिन्न-भिन्न स्तरों पर होते हैं तो समान पहुँच से असमान व्यापारिक परिणाम उत्पन्न होने की संभावना होती है। पूँजी, तकनीक एवं पैमाने की भिन्न-भिन्न पहुँच के कारण भिन्न आर्थिक क्षमताओं वाले देश समान रूप से प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम नहीं होंगे। परिणामस्वरूप, विकास कार्यसूची सहित एक RFTA में गैर-पारस्परिक पहुँच प्रणाली को सम्मिलित करने की अधिक विकसित अर्थव्यवस्थाएँ कम विकसित अर्थव्यवस्थाओं को एकपक्षीय छूट प्रदान करें। अतः भारत ने बदले में बांग्लादेश द्वारा समान कार्य की माँग किये बिना सिले-सिलाये वस्त्र क्षेत्र को खोल दिया है। इस प्रकार के गैर-पारस्परिक पहुँच का कारण यह है कि कम विकसित देशों को अधिक विकसित देशों के अपेक्षाकृत बड़े बाजारों में पहुँच की आवश्यकता होती है।

LDCs के संबंध में अब गैर-पारस्परिक पहुँच को सामान्यतः स्वीकार किया जाता है। WTO से पूर्व की अवधि में गैर-पारस्परिक पहुँच विशेष एवं विभेदकारी व्यवहार (Special and Differential Treatment–DST) के रूप में व्यापार समझौते के अंग थी। तथापि, गैर-पारस्परिक पहुँच अनेक बहुपक्षीय व्यापारिक समझौतों में सम्मिलित हो गयी है जैसे– यू.एस.ए. की AGOA (African Growth and Opportunity Act) एवं EU की अफ्रीका के लिए 'अस्त्र-शस्त्र छोड़कर कुछ भी' (Anything But Arms)। इस सिद्धांत का विस्तार दक्षिण एशियाई स्वतंत्र व्यापार समझौते (SAFTA) के संबंध में किया जा सकता है। यह इस बात को स्वीकार करेगा कि एक उभरती हुई अर्थव्यवस्था के रूप में भारत को अपेक्षाकृत छोटे एवं या निर्धन अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षा अधिक लाभ प्राप्त हैं। इस प्रकार की गैर-पारस्परिक पहुँच SAFTA को क्षेत्र की वृद्धि के इंजन के रूप में कार्य करने के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था के आकार एवं शक्ति का उपयोग करने में सक्षम बनायेगी।

SAFTA में गैर-पारस्परिक पहुँच की प्रणाली छोटे दक्षिण एशियाई देशों के डर पर विजय प्राप्त करने में सहायता करेगी जिन्हें भारत द्वारा आधिपत्य जमाने का डर होता है। इसके साथ ही, यह भारतीय फर्मों को मूल्य श्रृंखला में ऊपर की ओर जाने के लिए बाध्य करेगी। दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय व्यापार को कई राजनीतिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। किंतु भारत की कल्पनाशील व्यापार नीति क्षेत्र पर प्रभाव डालना प्रारंभ कर रही है।

20.4.6 व्यापार-श्रम एवं पर्यावरण संबंधी मानदंड

व्यापार, श्रम एवं पर्यावरण संबंधी मानदंडों के बीच संबंधों पर अत्यधिक विचार-विमर्श हुआ है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार स्पष्ट रूप से श्रम मानदंडों में अंतर से संबंधित होता

है। मज़दूरियों के स्तर पर यह निश्चित रूप से संबंधित होता है। बहुत देशों में मज़दूरियों के कम होने पर श्रम प्रधान उत्पादों एवं कार्यों के उत्पादन एवं निर्यात में विशिष्टीकरण होने की प्रवृत्ति पाई जाती है। कभी-कभी निहित श्रम नैतिक रूप से असंगत प्रकार का होता है जैसे बाल-श्रमिक, बलात्/बंधुआ श्रमिक। क्या इस प्रकार के बलात् श्रमिकों के रूपों द्वारा उत्पादित वस्तुओं को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की अनुमति दी जानी चाहिए।

यह 2000 के दशक में अत्यधिक विचार-विमर्श का विषय था। भारत सहित अनेक विकासशील देश इस बात पर अड़े रहे कि श्रम मानदंडों की बातों पर विचार-विमर्श करने के लिए व्यापार नीति एक उपयुक्त माध्यम नहीं है या WTO एक उपयुक्त मंच नहीं है। श्रम मानदंडों से संबंधित बातें अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O.) में सम्मिलित की जानी चाहिए। वे इस बात पर अड़े रहे कि व्यापार पहुंच एवं श्रम मानदंडों के बीच संबंध नहीं होने चाहिए।

व्यापार नीति के स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय रूप से यह सहमति है कि बाल श्रमिक या बलात् श्रमिकों की सहायता से निर्मित वस्तुओं के आयातों पर रुकावट जैसी व्यापारिक कार्यवाही का उपयोग श्रम मानदंडों को सुधारने के लिए प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। एक Nike, Marks एवं Spencer तथा जैसे बड़े क्रेताओं के कोड के अंतर्गत, पूर्तिकर्ताओं द्वारा जिन कोडों के पालन किये जाने की आशा की जाती है, उनमें बाल श्रमिकों को रोज़गार में न रखना सम्मिलित होता है। यद्यपि भारतीय कानून भी जोखिम रहित कार्यों में 14 वर्ष से अधिक आयु के बाल श्रमिकों को अनुमति प्रदान करता हैं ये वैश्विक क्रेता सामान्यतः 18 वर्ष की विभाजन आयु पद दृढ़ बने रहते हैं।

अतः यदि परस्पर सरकारों के स्तर पर व्यापार नीति श्रम मानदंड वास्तविक व्यापार, सिले-सिलाए वस्त्रों के वास्तविक ठेकों एवं इस प्रकार के अन्य उत्पादों में विचार-विमर्श नहीं होते हैं तो बाल श्रमिकों से संबंधित बातें निश्चित रूप से सामने आ जाती हैं। अतः वस्तुतः सिले-सिलाये वस्त्रों के उत्पादन के अनेक क्षेत्रों में बाल श्रमिकों को रोज़गार न देने में कुछ सुधार हुआ है। किंतु इसमें यह भी ध्यान देने योग्य है कि इस प्रकार का रोज़गार न देना वास्तव में अनिवार्य रूप से कारखाना स्तर मात्र पर लागू किया जाता है तथा उसका प्रबंधन किया जाता है। गृहस्थ स्तर पर प्रायः बहिस्रोत किये जाने वाले हाथ की कढ़ाई जैसे कायों में यदि हाथ की कढ़ाई के लिए समुदाय स्तर पर केंद्रों या कारखाना स्तर पर कार्य के रूप में परिवर्तन नहीं किया जाता है तो बाल श्रमिकों को रोज़गार न देने का प्रबंधन कार्य कठिन हो जाता है।

बलात् श्रमिकों या श्रम अधिकारों से संबंधित अनेक अन्य बाते हैं जैसे श्रम संघ बनाने का अधिकार, जिनमें उल्लंघन होते रहते हैं किंतु इन बातों पर उतना ध्यान नहीं दिया गया है जितना कि बाल श्रमिकों पर दिया गया है तथापि हाल ही में भारत में नहीं, किंतु चीन में अमरीकी ऐपिल कंपनी के लिए ठेके के रूप में कार्य करने वाले एक बड़ी विनिर्माता कंपनी Foxconn में घटिया कार्य एवं मज़दूरी की दशाओं के संबंध में अत्यधिक प्रचार हुआ है।

यदि देशों के बीच व्यापार श्रम मानदंडों में अंतर पर निर्भर करता है तो क्या पर्यावरण संबंधी मानदंडों में अंतरों की उसके समान ही भूमिका होती है? पर्यावरण संबंधी मानदंड सामान्यतः विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों में निर्बल एवं घटिया रूप में लागू किये जाते हैं। तो क्या प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों की प्रवृत्ति विकासशील

देशों के 'प्रदूषण स्वर्ग' को निर्यात होने की प्रवृत्ति होती है। क्या न्यून मज़दूरियों के अतिरिक्त घटिया पर्यावरण संबंधी मानदंड विकासशील देशों में प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों के स्थान-निर्धारण में तत्त्व हो गये हैं? घटिया पर्यावरण संबंधी मानदंड निश्चित रूप से प्रदूषण फैलाने वाले कार्यों के विकासशील देशों को निर्यात में योगदान करते हैं। पर्यावरण संबंधी मानदंडों को पूरा करने में लागत निहित होती है। इस प्रकार की लागतों से बचाव करने के लिए प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों का विकासशील देशों में निर्यात करने की प्रवृत्ति होगी जहाँ इस प्रकार की मौद्रिक लागतें संबंधित फर्म द्वारा वहन न की जाती हों।

किंतु यहाँ दो बातें ध्यान देने योग्य हैं : कचरे के रूप में निर्यातित सब कुछ वास्तव में मूल्य रहित नहीं होता है। एक वस्तु जो अब उपयोग करने योग्य नहीं है, इसलिए वह कचरा नहीं होती है। इसमें अनेक उपयोगी पुर्जे हो सकते हैं। इसकी मरम्मत भी हो सकती है तथा द्वितीय श्रेणी (घटिया) के माल के बाजार में पुनर्बिक्री हो सकती है। दूसरी बात यह है कि इस प्रकार के कचरे में लेन-देन प्रायः बहुत बड़ी संख्या में लोगों को रोज़गार प्रदान करता है।

जहाजों को तोड़ने के काम का उदाहरण लें, जहाज के जीवन की समाप्ति पर उसे भारत में अलग बंदरगाह लाया जाता है। वहाँ यह तोड़ा जाता है। लोहा एवं इस्पात स्टील की पुनर्प्रक्रिया करने वाली मिलों को चला जाता है। समुद्री इंजनों की प्रायः मरम्मत की जाती है तथा उनका उपयोग जनरेटर के रूप में किया जाता है। वास्तव में जहाज निर्माण का अधिकांश भाग अलग कर दिया जाता है तथा वह पुनः उपयोग के लिए बेच दिया जाता है। अतः कचरे के रूप में मूल्य रहित वस्तु की धारणा एक मिथ्या नाम है। कचरा विभिन्न प्रकार के उत्पादन में आगतों के रूप में वापस जाता है। इसके अतिरिक्त इसे तोड़ने एवं उन्हें अलग करने लगा हुआ अधिकांश श्रम, श्रम प्रधान होता है। इस प्रकार के कार्यों के विकासशील देशों में स्थित होना अपरिहार्य होता है जहाँ श्रम सापेक्षिक रूप में सस्ता होता है।

परिणामस्वरूप कचरे के इलाज से कई प्रकार के रोज़गार का सृजन होता है तथा यह नये उत्पादन के कई लाभप्रद आगत उत्पन्न करता है। तथापि, जिस बात को देखने की आवश्यकता होती है वह यह है कि जोखिमपूर्ण एवं खतरनाक पदार्थों के अनुपयुक्त तरीके से व्यवहार न किया जाय। उदाहरण के लिए, जहाजों में प्रायः अस्बेस्टस एवं पारा होता है। इन दोनों के साथ व्यवहार करने, सावधानी एवं उपयुक्त तकनीक की आवश्यकता होती है। कचरे के निपटान से संबंधित बेसल अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के अनुसार यह आवश्यक होता है कि किसी विकासशील देश में जहाज तोड़ने के लिए भेजने से पूर्व इस प्रकार के जोखिमपूर्ण पदार्थ का उचित प्रकार से व्यवहार किया जाय तथा जहाज से हटा दिया जाय। वास्तव में, इसका प्रायः उल्लंघन किया जाता है। किंतु इसकी जाँच की जा सकती है जैसा कि भारतीय सुप्रीम कोर्ट ने यह आग्रह किया कि फ्रांसीसी हवाई जहाज वाहक 'Clemenceau' तब तक भारत नहीं लाया जा सकता जब तक कि संपूर्ण जोखिमपूर्ण पदार्थ उसमें से हटा न दिये जाएं।

दूसरी ओर, बाल श्रमिकों को हटाने के मामले में यह ध्यान देने योग्य है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में भागीदारी से पर्यावरण संबंधी मानदंडों में सुधार उत्पन्न हो सकता है। उदाहरण के लिए, अधिकांशतः अनौपचारिक क्षेत्र में होने वाले चमड़ा सिझाने एवं कपड़ों की रंगाई करने की दोनों ही भारतीय प्रक्रियाएँ प्रायः बहुत खतरनाक रसायनों का

उपयोग करती हैं। इस प्रकार के खतरनाक रसायनों से निर्मित चमड़ा उत्पाद एवं सिले-सिलाये वस्त्रों का आयात प्रायः विकसित देशों द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया है। इसके परिणामस्वरूप इनमें से कुछ पूर्ति श्रृंखलाओं को साफ कर दिया गया है जैसे चैन्नई के आस-पास चमड़ा उत्पाद पूर्ति श्रृंखला। किंतु इस प्रकार के सुधरे हुए श्रम एवं पर्यावरण संबंधी मानदंड प्रायः मात्र निर्यात करने वाली श्रृंखलाओं तक ही सीमित रहते हैं। घरेलू बाजार के लिए उत्पादन करने वाली इसी के समान श्रृंखलाएँ इस प्रकार के सुधारों के बिना बनी रहती हैं।

20.5 निर्यात–आयात नीति 2009-14

2009-14 की अवधि के लिए दीर्घकालीन निर्यात-आयात नीति की घोषणा 7 अगस्त, 2009 को की गयी थी। यह नीति निर्यातों में अप्रत्याशित संकुचल, निर्यातकों के लिए कर-वापसी, अपेक्षाकृत कम लेन-देन लागतों, बेहतर आधारभूत ढाँचे के आश्वासन की पृष्ठभूमि में निर्मित की गयी थी। परंपरागत किंतु मंदी पीड़ित यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका के बाजार के बजाय लैटिन अमेरिका, ओशीनिया एवं अफ्रीका के नये बाजारों को अधिक वस्तुएँ एवं सेवाएँ निर्यात करने की विस्तृत रणनीति इस नीति की कुछ विशेष बातें हैं।

20.5.1 उद्देश्य

नीति का अल्पकालीन उद्देश्य निर्यातों में घटती हुई प्रवृत्ति को रोकना एवं उसे विपरीत करना तथा विशेष रूप से उन क्षेत्रों को अतिरिक्त समर्थन प्रदान करना था जो विकसित विश्व में मंदी के कारण बुरी तरह से पीड़ित हुए हैं। स्थिति को देखते हुए नीति का उद्देश्य $200 बिलियन के वार्षिक निर्यात लक्ष्य के साथ 15 प्रतिशत वार्षिक निर्यात वृद्धि प्राप्त करना है।

सरकार यह आशा करती है कि देश पुनः लगभग 25 प्रतिशत वार्षिक की ऊँची निर्यात वृद्धि मार्ग पर वापस आयेगा तथा वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यातों को 2014 तक दुगुना कर देगा। दीर्घकाल में नीति का उद्देश्य 2020 तक विश्व के व्यापार में भारत के अंश को दुगुना करना है जो 2008 तक 1.64 प्रतिशत रहा। नीति के अन्य दीर्घकालीन उद्देश्य निम्न थे :

- विस्तृत होते विश्व बाजार अवसरों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए देश का संक्रमण एक विश्वोन्मुख कंपनशील अर्थव्यवस्था की ओर तीव्र करना;
- उत्पादन में वृद्धि करने के लिए आवश्यक कच्चे माल, मध्यवर्ती वस्तुओं, पुर्जों, उपभोग की जाने वाली वस्तुओं की सुलभता प्रदान करके सतत् आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करना;
- भारतीय कृषि, उद्योग एवं सेवाओं की तकनीकी शक्ति एवं कार्यकुशलता में वृद्धि करना तथा उसके द्वारा अपनी प्रतिस्पर्धा शक्ति में सुधार करना तथा अंतर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत गुणवत्ता के मानदंडों को प्रोत्साहित करना;
- उपभोक्ताओं को उचित कीमतों पर अच्छी गुणवत्तायुक्त उत्पादों को प्रदान करना।

20.5.2 वृहत् लक्षण

- **बाजार एवं उत्पाद विविधीकरण के लिए समर्थन**

i) नये उत्पादों एवं बाजारों को जोड़ने के लिए अध्याय 3 के अंतर्गत प्रोत्साहन योजनाएँ विस्तृत कर दी गयी है। संकेंद्रित बाजार योजना (Focus Market Scheme) के अंतर्गत 26 नये बाजार जोड़ दिये गये हैं। इनमें से 16 बाजार लेटिन अमेरिका एवं 10 बाजार एशिया-ओशीनिया के सम्मिलित हैं।

ii) संकेंद्रित बाजार योजना (FMS) के अंतर्गत उपलब्ध प्रोत्साहन राशि को 2.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 3 प्रतिशत कर दिया गया है। संकेंद्रित उत्पाद योजना (FPS) के अंतर्गत उपलब्ध प्रोत्साहन राशि को 1.25 प्रतिशत से बढ़ाकर 2 प्रतिशत कर दिया गया है।

iii) बाजार संबद्ध संकेंद्रित उत्पाद योजना (MLFPS) को औषधि, कृत्रिम वस्त्र, मूल्यवर्धित खड़ एवं प्लास्टिक, सिले-सिलाये वस्त्र, बुने हुए एवं काँटे से बुनाई किये हुए वस्त्र, कांच उत्पाद, लोहा एवं इस्पात उत्पाद एवं अल्यूमीनियम उत्पादों तक विस्तृत कर दिया गया है।

- **प्रौद्योगिकी उच्चीकरण, EPCG ढील एवं DEPB**

i) इंजीनियरिंग एवं इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों, मूल रसायन एवं औषधि, सिले-सिलाये वस्त्र एवं कपड़े प्लास्टिक, हस्तशिल्प एवं चमड़ा इत्यादि के लिए शून्य शुल्क पर EPCG योजना। यह TUES एवं प्रतिष्ठा धारक योजना (Status Holder Scheme) जैसी अन्य योजनाओं से वर्तमान में लाभ प्राप्त करने वालों को उपलब्ध नहीं है।

ii) वर्तमान प्लांट एवं मशीनरी के जीवन में वृद्धि करने के लिए EPCG योजना के अंतर्गत पुर्जों, सांचों के आयात पर निर्यात दायित्व को कम करके सामान्य विशिष्ट निर्यात दायित्व के 50 प्रतिशत तक कम कर दिया गया है।

iii) निर्यातों में कमी को देखते हुए देश से निर्यात में कमी होने वाले किसी विशिष्ट वित्तीय वर्ष के वार्षिक औसत निर्यात दायित्व के पुनर्निर्धारण की सुविधा को पंचवर्षीय नीति अवधि 2009-14 तक के लिए बढ़ा दिया गया है।

iv) निर्यातों में तीव्रता लाने के लिए अतिरिक्त शुल्क साख पर्ची प्रतिष्ठा धारकों को पिछले निर्यातों के FOB मूल्य के 1 प्रतिशत पर्ची की दर से दी जायगी। यह शुल्क साख पर्ची पूँजीगत वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए उपयोग की जा सकती है। यह सुविधा 31 मार्च, 2011 तक उपलब्ध रहेगी।

v) यह नीति प्रतिष्ठा धारकों को निर्गमित की जाने वाली शुल्क साख पर्ची के हस्तांतरण की अनुमति प्रदान करती है। यह हस्तांतरण केवल प्रतिष्ठा धारकों को ही किया जा सकता है तथा पर्चियाँ केवल शील श्रृंखला उपकरण प्राप्त करने के लिए ही उपयोग की जा सकती हैं।

- **विदेशी व्यापार नीति की स्थिरता/निरंतरता**

i) नीति की शासन प्रणाली में स्थिरता लाने के लिए शुल्क अधिकार पास बुक (DEPB) योजना को एक वर्ष के लिए 31 दिसंबर तक विस्तारित किया जा रहा

है। 7 क्षेत्रों के जहाज से भेजने से पूर्व 2 प्रतिशत ब्याज आर्थिक सहायता को 2009 के बजट में 31 मार्च, 2010 तक के लिए बढ़ा दिया गया है।

ii) DEPB दरों के अंतर्गत ईंधन पर सीमा शुल्क संघटक की दलाली भी सम्मिलित होगी जहाँ प्रमापित आगत-निर्गत व्यवस्था में ईंधन को एक उपभोज्य के रूप में अनुमति दी जाती है।

iii) बजट 2009-10 के अंतर्गत 100 प्रतिशत निर्यातोन्मुख इकाइयों (EOUs) एवं IT अधिनियम के अंतर्गत STPI को आय कर छूट को वित्तीय वर्ष 2010-11 तक के लिए बढ़ा दिया गया है।

iv) विपरीत रूप से प्रभावित क्षेत्रों को बढ़ा हुआ 95 प्रतिशत का ECGC लाभ प्रदान करने के लिए दिसंबर, 2008 में प्रारंभ की गयी समायोजन सहायता योजना को मार्च, 2010 तक निरंतर बढ़ा दिया गया है।

- **निर्यातोन्मुख इकाइयों के लिए सुविधाएँ**

i) DTA बिक्री के लिए संपूर्ण अधिकार के 50 प्रतिशत के अंतर्गत 'समान वस्तु' मापदंड में परिवर्तन किये बिना निर्यातोन्मुख इकाइयों को वर्तमान 75 प्रतिशत के बजाय उनके द्वारा उत्पादित उत्पादों को DTA में 90 प्रतिशत की सीमा तक बेचने की अनुमति प्रदान कर दी गयी है।

ii) सीमा शुल्क क्षेत्र निर्माण को सुस्पष्ट बनाने के लिए आगम विभाग (revenue department) ग्रेनाइट EOUs द्वारा 5 प्रतिशत से अधिक पुर्जों को प्राप्त करने में सक्षम बनाने के लिए एक स्पष्टीकरण निर्गमित करेगा। कुछ निश्चित सुरक्षा की सीमाओं के अंतर्गत EOUs को सुदृढ़ बनाने के लिए निर्मित वस्तुएँ प्राप्त करने की अनुमति प्रदान की जायगी।

iii) अनुमोदन मंडल EOUs के विशुद्ध विदेशी विनिमय आय की गणना के उद्देश्य से ब्लाक अवधि के एक वर्ष के विस्तार पर विचार करेगा। EOUs को SAD के संघटक एवं DTA बिक्री पर शिक्षा उप-कर के लिए साख सुविधा की अनुमति प्रदान की जायगी।

- **मूल्यवर्धित विनिर्माण पर जोर**

मूल्यवर्धित निर्मित वस्तुओं के निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए अग्रिम अनुज्ञप्ति योजना के अंतर्गत आयातित आगतों पर कम से कम 15 प्रतिशत मूल्यवर्धन को निश्चित किया गया है। प्रोजेक्ट निर्यात एवं बड़ी संख्या में निर्मित वस्तुओं को FPS एवं MLFPS के अंतर्गत लाया गया है।

- **निर्यातकों को पदत्त लचीलापन**

i) अग्रिम अनुज्ञाप्ति/DFIA/EPCG अनुज्ञाप्ति के अंतर्गत निर्यात दायित्वों में कमी हो जाने से सीमा शुल्क का भुगतान शुल्क साख पर्ची खाते में देनी (debit) प्रविष्टि द्वारा अनुमति प्रदान की गयी है। पहले भुगतान की अनुमति केवल नकद में होती थी।

ii) प्रतिबंधित मदों की पुनः पूर्ति के रूप में आयात की अनुमति हस्तांतरित DFIA,

के बदले दी जायगी। USA के संबंध में प्रदर्शनी में भागीदारी के लिए निर्यातित रत्न एवं आभूषण के पुनः आयात की समय सीमा को 60 दिन से बढ़कर 90 दिन कर दिया गया है।

- **कार्य विधियों का सरलीकरण एवं लेन-देन लागतों में कमी**

i) निर्यातकों द्वारा न्यादर्शों (Samples) के शुल्क-मुक्त आयात को सुविधा प्रदान करने के लिए न्यादर्श/इकाइयों की संख्या को वर्तमान में 15 से बढ़ाकर 50 कर दिया गया है। इस प्रकार के न्यादर्शों का सीमा शुल्क निबटान आयातकर्ताओं द्वारा न्यादर्शों के मूल्य एवं मात्रा के संबंध में दी गयी घोषणाओं पर आधारित होगा।

ii) घरेलू मध्यवर्ती विनिर्माता द्वारा (अमान्यता पत्र के बदले) एक अग्रिम अनुराशि धारक को पूर्ति की स्थिति में धनराशि वापसी के बदले उत्पाद शुल्क के भुगतान से दो अवस्थाओं तक छूट को अनुमति प्रदान करना।

iii) प्रोत्साहन राशि की स्वीकृति के लिए अब शुल्क वसूल नहीं किया जायगा। सभी अन्य 18 अनुज्ञाप्तियों के लिए अधिकतम शुल्क को 1,50,000/- रुपये से कम करके 1,00,000/- रुपये की जा रही है तथा (EDI आवेदन पत्रों के लिए) वर्तमान में 75,000/- रुपयें से कम करके 50,000/- रुपये किया जा रहा है।

20.5.3 मूल्यांकन

सकारात्मक लक्षण

- विदेश व्यापार नीति तीन ऐसे बड़े स्तंभों की पहचान करती है जो मार्च, 2014 तक वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यातों को दुगुना करने के लिए लक्ष्य को प्राप्त करने में भारत का समर्थन करेंगे। तीन स्तंभ – निर्यातों से संबंधित आधारभूत ढाँचे में सुधार, लेन-देन लागतों में कमी करना तथा सभी अप्रत्यक्ष करों एवं अधिभारों पूर्ण राहत प्रदान करना है।

- नीति घोषणापत्र का संपूर्ण दृष्टिकोण कुछ ऐसे निश्चित क्षेत्रों की भेद्यता (Vulnerability) की पहचान करता है जो रोज़गारोन्मुख एवं संवेदनशील हैं। अतः अनेक ऐसे प्रयासों की घोषणा की गयी है जो पुनर्गठित योजनाओं के माध्यम से बढ़ी हुई बाजार पहुँच को सक्षम बनायेंगे। जैसे– संकेंद्रित बाजार, संकेंद्रित उत्पाद एवं बाजार संबद्ध संकेंद्रित उत्पाद योजनाएँ।

- यह ध्यान देने योग्य है कि संकेंद्रित बाजार योजना के अंतर्गत उपलब्ध प्रोत्साहन राशि को आधा प्रतिशत बढ़ाकर 3 प्रतिशत कर दिया गया है तथा संकेंद्रित उत्पाद योजना में प्रोत्साहन राशि 1.25 प्रतिशत से बढ़ाकर 2 प्रतिशत कर दिया गया है। प्रोत्साहन राशि की दरों में इन सीमांत वृद्धि के साथ उनका क्षेत्र अत्यधिक महत्त्वपूर्ण रूप से विस्तृत कर दिया गया है। संकेंद्रित बाजार योजना के अंतर्गत सम्मिलित 26 नये बाजारों में से 16 लैटिन अमेरिका एवं 10 एशिया-ओशीनिया में है जिसमें अपेक्षाकृत अधिक बड़े बाजार सम्मिलित हैं जैसे – दक्षिणी अफ्रीका, ब्राजील एवं मेक्सिको। यह हमारे निर्यातकों को उन योजनाओं के अंतर्गत लाभों को प्राप्त करने में सक्षम बनायेगी जो अब तक उन्हें नहीं मिलते थे।

- पूँजीगत वस्तुओं के आयात से संबंधित नये नीतिगत प्रयास वास्तव में सामयिक हैं। EPCG योजना भारत के निर्यात वस्तुओं का उत्पादन करने वाले क्षेत्र के

उच्चीकरण एवं आधुनिकीकरण में वास्तव में लाभ पहुँचा रही है। पूँजीगत वस्तुओं की शून्य शुल्क पर आयात सुविधा प्राप्त करने की नई प्रोत्साहन राशि तकनीक के उच्चीकरण की प्रक्रिया को तीव्र करने में दीर्घकाल तक बनी रहेगी।

- नीति उन रोज़गारोन्मुख क्षेत्रों पर विशेष जोर देगी जिनमें मंदी के कारण रोज़गार में कमी हो गयी थी, विशेष रूप से कपड़ा, चमड़ा एवं हस्तशिल्प के क्षेत्रों में।

- सीमा शुल्क विभाग एवं विदेशी व्यापार के सामान्य निदेशालय (DGET) के बीच इलेक्टॉनिक संदेश विनिमय, DGFT योजनाओं के लिए सीमा शुल्क विभाग द्वारा जहाजी बिलों के दोहरे सत्यापन को रोकना, तथा EDI के माध्यम से निर्यात संवर्धन परिषदों RCMC को प्रमाणपत्र निर्गमित करने के लिए प्रोत्साहन स्वागत योग्य कदम हैं।

- यद्यपि बाजार विकास एवं प्रोत्साहन योजनाओं के लिए बढ़े हुए लाभ निर्यातक समुदाय को नये निर्यात गंतव्य स्थान की खोज करने में सक्षम बनायेंगे, शून्य शुल्क EPCG लाभ एवं अनेक महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों के प्रतिष्ठा धारकों के लिए 1 प्रतिशत अतिरिक्त शुल्क साख जैसे प्रौद्योगिकी उच्चीकरण के प्रोत्साहन भारत की प्रतिस्पर्धाशक्ति की वृद्धि में अत्यधिक सहायता करेंगे।

नकारात्मक लक्षण

- चिंता का एक क्षेत्र, जिस पर विदेश व्यापार नीति में प्रकाश नहीं डाला गया है वह यह है कि निर्यातों के साथ आयातों में भी कमी हुई है। 2009 से प्रारंभ यह कमी निरंतर बनी हुई है। अपेक्षाकृत कम गैर-तेल आयात घरेलू विनियोग में कमी सूचित करते हैं। अपेक्षाकृत कम आयातों ने भुगतान संतुलन के वस्तु व्यापार घाटे को काम कर दिया है। यह एक ऐसा परिणाम है जो यदि प्रबल निर्यात निष्पादन के माध्यम से प्राप्त होता तो अनुकूल होता।

- अन्य चिंता विदेशों, विशेष रूप से विकसित देशों में बढ़ता हुआ संरक्षणवाद है। भारत, जिसने हाल ही में दक्षिण कोरिया एवं आसियान (ASEAN) के साथ व्यापारिक समझौते किये हैं, बातचीत के दोहरे विकास दौर को पुनः प्रारंभ करने में बड़ी भूमिका निभाने की आशा करता है। DEPB जैसी भारत की कुछ निर्यात प्रोत्साहन योजनाएँ WTO नियमों के संगत नहीं है तथा उनके पुनरीक्षण करने की आवश्यकता है।

- यद्यपि 17 तकनीकी उत्पादों का संकेंद्रित उत्पाद (focus products) योजना में समावेश एक स्वागत योग्य कदम था किंतु प्रतिष्ठा धारकों (status holders) के लिए 1 प्रतिशत अतिरिक्त शुल्क पर्ची एवं EPCG के अंतर्गत आयातों पर शून्य शुल्क जैसे लाभों को उन इकाइयों तक सीमित कर देना जो प्रौद्योगिकी उच्चीकरण कोष योजना से लाभ नहीं उठा रही थीं, निराशाजनक था क्योंकि अधिकांश कपड़ा इकाइयाँ उपरोक्त योजना के अंतर्गत आती थीं तथा उन्हें लाभ प्राप्त नहीं होगा।

- बाजार संवृद्ध संकेंद्रित बाजार योजना (MLFPS) के अंतर्गत देशों की संख्या में वृद्धि से कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि योजना के अंतर्गत प्रोत्साहन राशि के लिए अर्द्धउत्पादों की सूची में केवल सिले सिलाए वस्त्र, बुनाई वाले कपड़े एवं कृत्रिम वस्त्र ही सम्मिलित थे। इस सुविधा के लिए सम्मिलित किये गये कंबोडिया एवं

वियतनाम जैसे देश सिले सिलाये वस्त्रों के बड़े निर्यातकों में से हैं। दूसरी ओर, वे धागे एवं बुने हुए कपड़ों की पर्याप्त मात्राओं का आयात करते हैं। तथापि कृत्रिम वस्त्रों को छोड़कर लाभों को इन उत्पादों तक विस्तृत नहीं किया गया।

- यह सच है कि वैश्विक रूप में औद्योगिक उत्पादन, बेरोज़गारी, प्रतिव्यक्ति विनियोग एवं उपभोग पर अत्यधिक विपरीत प्रभाव पड़ा है। WTO ने अनुमान किया है कि 2009 की अवधि में विश्व व्यापार में 9 प्रतिशत की कमी होगी। यदि ऐसा है तो इस प्रश्न पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है कि वैश्विक प्रवृत्ति को कम करने के लिए घरेलू व्यापार नीति क्या कर सकती है। इसके समाधान खोजने होंगे ताकि माँग में इतनी भारी कमी, विशेष रूप से विकसित विश्व में देखते हुए भारत के निर्यातों में वृद्धि हो सके। इस विषय पर विदेश व्यापार नीति शान्त है। इसका कोई कारण नहीं है कि भारत के निर्यातों में वृद्धि करने के लिए FTP को प्रयास नहीं करने चाहिए।

- नीति ने विशिष्ट क्षेत्रों में प्रतिष्ठा धारकों को निर्यातों के FOB मूल्य के 1 प्रतिशत दर पर अतिरिक्त शुल्क साख पर्ची प्रदान करने द्वारा वास्तविक उपयोगकर्ता शर्तों के साथ पूँजीगत वस्तुओं के आयात को प्रोत्साहित किया है। यह किस सीमा तक लाभप्रद होगी, यह संदेहजनक है क्योंकि अधिकांश प्रतिष्ठा धारक व्यापारी निर्यातक होते हैं। अतः वास्तविक उपयोगकर्ता शर्तों को पूरा करना उनके लिए कठिन होगा।

- नई FTP इस विश्वास पर आधारित प्रतीत होती है समय-परीक्षित निर्यात प्रोत्साहन योजनाओं ने निर्यात वृद्धि में योगदान किया है, अतः उन्हें बनाये रखना चाहिए। अतः यह पहले की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करने में असफल रही है। यह निर्यातकों के लिए लाइसेंस निर्गमित करने वाले कार्यालयों में और अधिक जाने एवं अधिक कागजी कार्यवाही करने का कारण बना देती है। यह लाइसेंस निर्गमित करने वाले कार्यालयों के अधिकारियों के हाथों में अधिक शक्ति संकेंद्रित कर देती है तथा इस प्रकार भ्रष्टाचार के अधिक अवसरों का सृजन करती है।

- यह नीति एकमुश्त प्रोत्साहन राशि के रूप में एक विस्तृत एवं प्रतिस्पर्धाशक्ति में वृद्धि करने वाली रणनीति के लिए क्षतिपूर्ति नहीं करती है क्योंकि भारतीय वस्तुएँ चीन, बांग्लादेश, वियतनाम एवं कंबोडिया जैसे देशों की अपेक्षा 20 प्रतिशत से अधिक मँहगी होती हैं। अपेक्षाकृत अधिक लागतें, अधिक साख दरों, श्रम की मज़दूरियों एवं लेन-देन लागतों के कारण हैं।

- यद्यपि विदेशी व्यापार वृद्धि के स्तंभ – आधारभूत ढाँचा, शुल्कों की वापसी एवं लेन-देन लागतों में कमी पर विचार किया गया है किंतु नीति ने स्वयं के निर्यातों के वर्तमान स्तर को सतत बनाये रखने के अल्पकालीन उद्देश्य तक प्रतिबंधित कर रखा है। स्थिरता के दृष्टिकोण से नीति के अंतर्गत बहुत कम किया गया है क्योंकि राजकोषीय सुविधाएँ केवल 2011 तक के लिए ही दी गयी हैं। इसके अतिरिक्त, निर्यातकों को बैंकों से अपेक्षाकृत सस्ती वित्त सुविधा उपलब्ध कराने के लिए कुछ किया जाना चाहिए। यह कुछ ऐसी बात है जो उन देशों में हो रही है जो हमारे प्रतिस्पर्धी हैं

- मात्र राजकोषीय प्रोत्साहन ही निर्यातों में वृद्धि नहीं करेंगे। आज महत्त्वपूर्ण समस्या यह है कि वैश्विक मंदी के कारण हमारे निर्यात उत्पादों की मांग नहीं है। हमें

इस काम की आवश्यकता है कि हमारे निर्यात अधिक प्रतिस्पर्धी बनाये जायें ताकि हम अपने प्रतिस्पर्धियों पर विजय प्राप्त कर सकें। इसके लिए हमारा संभार तंत्र (logistics) की लागतों को वर्तमान में 13 प्रतिशत से कम होकर 8 प्रतिशत हो जाना चाहिए जो अंतर्राष्ट्रीय रूप से लागतें होती हैं। इन सब के लिए संबंधित मंत्रालयों को एक साथ आना चाहिए तथा निर्यातों एवं आयातों की सुविधाओं में सुधार करना चाहिए।

बोध प्रश्न 3

1) खाद्यान्न व्यापार में 'अनिश्चिता' (Stop-Go) शब्द का अर्थ बताइए।

.....

.....

.....

.....

2) क्षेत्रीय स्वतंत्र व्यापार समझौता' बनाने का क्या आधार है?

.....

.....

.....

.....

3) निर्यात-आयात नीति 2009-14 के तीन बड़े स्तंभों की पहचान कीजिए जिनका उद्देश्य वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यातों में वृद्धि करना है।

.....

.....

.....

.....

4) व्यापार नीति 2009-14 की तीन सीमाओं का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

20.6 सारांश

व्यापार नीति से अभिप्राय निर्यात एवं आयात संबंधी नीतियों से होता है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय व्यापार नीति के लक्षण निर्यात निराशावाद एवं आयात नियंत्रण

के थे। यह स्थिति 1980 के दशक में परिवर्तित होने लगी तथा नियंत्रण शासन प्रणाली 1991 के आर्थिक सुधार के पश्चात् त्याग दिया गया। विश्व व्यापार की परिवर्तित परिस्थिति में विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की फर्मों ने विकसित अर्थव्यवस्था के बाजारों में प्रवेश प्राप्त करने का प्रबंधन कर लिया है। भारत का IT एवं BPO सेवाओं में विश्व व्यापार में पर्याप्त अंश है। इसका भारतीय निर्यातों एवं GDP में योगदान तीव्र गति से बढ़ रहा है। उत्पादन में श्रम विभाजन के कारण जैसे विकसित देशों द्वारा डिज़ाइन निर्माण इत्यादि, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से संबंधित मामलों में बौद्धिक संपदा अधिकार प्रमुख हो गये हैं। विकसित देशों द्वारा अपने किसानों को अनुदान के कारण कृषि उत्पाद व्यापार में वाद-विवाद का अन्य क्षेत्र हो गया है। क्षेत्रीय व्यापार दक्षिण एशिया में केवल 3 प्रतिशत तक ही सीमित हैं तथा क्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि करने के संबंध में आशंकाएँ उत्पन्न हो गयी हैं। इस क्षेत्र में सबसे बड़ा देश होने के कारण भारत पर क्षेत्र व्यापार प्रोत्साहित करने का प्रमुख उत्तरदायित्व है। दीर्घकालीन निर्यात-आयात नीति 2009-14 का लक्ष्य 2020 तक विश्व व्यापार में भारत के अंश को दुगुना करना तथा विस्तृत होते वैश्विक बाजार अवसरों से अधिकतम लाभ प्राप्त करना है।

20.7 अभ्यास प्रश्न

1) ''1991 से पूर्व भारत की व्यापार नीति आत्मनिर्भरता की नीति से व्युत्पन्न की गयी थी'' इस कथन पर प्रकाश डालते हुए भारत की व्यापार नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

2) उन महत्त्वपूर्ण मद्दों की व्याख्या कीजिए जो निर्णायक हैं और इस कारण अतः भारत की व्यापार नीति में उन पर विचार-विमर्श करने की आवश्यकता है।

3) निर्यात-आयात नीति 2009-14 का मूल्यांकन कीजिए।

20.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Basu, Kaushik and Annemic Maertens (ed.) (2011) : The New Oxford Companion To Economics in India, Oxford University Press, New Delhi.

Bhagwati, Jagdish, (2004) : In Defence of Globalization, OUP, New Delhi.

RBI : Annual Reports.

MOF : Economic Surveys.

20.9 शब्दावली

1) **WTO – विश्व व्यापार संगठन :** यह व्यापार एवं तटकर पर सामान्य समझौता (GATT) के उत्तराधिकारी के रूप में स्थापित किया गया। इसका मुख्यालय जेनेवा, स्विटज़रलैंड में स्थित है। एक सदस्यता आधारित संगठन है। स्वीकृत हो जाने पर एक सदस्य संगठन के सभी यंत्रों में सहमत होता है। GATT से भिन्न WTO में विवाद का समाधान करने की एक प्रक्रिया है। कोई भी सदस्य किसी अन्य सदस्य के विरुद्ध अपना मुकदमा कायम करने में स्वतंत्र होता है। यह औपचारिक समानता की अनुमति प्रदान करता है किंतु जेनेवा में वकील नियुक्त करने की लागत के कारण यह प्रायः कठिन होता है। किंतु उदाहरण के लिए, भारत ने यू.एस. के विरुद्ध मुकदमा दायर किया और विजय प्राप्त की है। यू.एन. जनरल

असेम्बली के समान WTO में मतदान 'एक देश एक मत' के आधार पर होता है किंतु निर्णय सामान्यतः अनौपचारिक विचार-विमर्श प्रक्रिया के माध्यम से किये जाते हैं।

2) **MNC – बहुराष्ट्रीय निगम :** बहुराष्ट्रीय निगम या जिसे कभी-कभी राष्ट्र-पार निगम (Trans-national Corporation- TNC) भी कहा जाता है, से अभिप्राय एक ऐसे निगम से होता है जिसकी सहायक या शाखाएँ एक से अधिक देशों में होती हैं। शाखाओं का स्वामित्व प्रायः शत-प्रतिशत पैतृक निगम का होता है किंतु वे भी अल्पांश विनियोग में हो सकती हैं। MNCs सामान्यतः विकसित देशों या धनी देशों से समझी जाने वाली होती हैं। जैसे बड़ी तेल कंपनी Exxan या BP (British Petroleum) तथा वाहन उत्पादक फोर्ड, जनरल मोटर्स, मर्सिडीज़ बेंज़, निशान या होण्डा आदि। हाल ही में, बड़े माध्यम आय देशों से कई MNC उत्पन्न हो गयी है। भारत की टाटा या चीन की Haier बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था से MNC के उदाहरण हैं।

3) **IMF – अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष :** द्वितीय विश्व युद्ध के अंत में विश्व बैंक के साथ अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) ब्रेटन वुड्स सम्मेलन के परिणामस्वरूप स्थापित किया गया। विश्व बैंक विकास वित्त में व्यवहार करता है। जबकि IMF का कार्य अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक, विदेशी विनिमय दरों एवं संबंधित वैश्विक मामलों का प्रबंधन करना होता है। यह भुगतान संतुलन एवं अन्य अंतर्राष्ट्रीय भुगतान समस्या वाले देशों के अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करता है। इसका वर्णन 187 सदस्य देशों (जुलाई 2010 में) के ''एक संगठन के रूप में किया जाता है जो वैश्विक मौद्रिक सहयोग को प्रोत्साहित करने, वित्तीय स्थिरता प्राप्त करने, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को सुविधाजनक बनाने, रोज़गार के उच्च स्तर एवं सतत् आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करने एवं निर्धनता को कम करने का कार्य करता है।'' IMF से ऋण प्रायः घरेलू मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति के विषय में जुड़ी हुई शर्तों के साथ प्राप्त होता है। इसके अंतर्गत एक अलिखित परंपरा है कि IMF का अध्यक्ष एक यूरोपीय व्यक्ति तथा विश्व बैंक का अध्यक्ष अमरीकी व्यक्ति होगा। वर्तमान में (ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका, भारत एवं चीन) शक्तियों की बढ़ती हुई मज़बूती के कारण इन संगठनों के अध्यक्ष से संबंधित इन परंपराओं को बढ़ती चुनौती का सामना करना पड़ रहा है।

4) **कोटा-बनाओ–छँटाई करो (Cut-make-Trim-CMT) :** CMT से अभिप्राय सिले-सिलाये वस्त्रों की अंतिम संयोजन या बनाने के कार्य से होता है। (कपड़े को) काटो, (सिले सिलाए वस्त्र) बनाओं एवं छँटाई करो। यह एक सिले-सिलाये वस्त्र के विनिर्माण का अंतिम कार्य होता है। यह श्रम प्रधान होता है तथा अब एशिया की श्रम बहुत अर्थव्यवस्थाओं में बड़े पैमाने पर किया जाता है जहाँ श्रम सापेक्षिक रूप से सस्ता होता है।

5) **सेवाओं में व्यापार पर सामान्य समझौता (GATS) :** यह सेवाओं में व्यापार पर समझौता होता है जो WTO समझौते के एक भाग का निर्माण करता है। पहले विद्यमान GATT के अंतर्गत सेवाओं के संबंध में कोई समझौता नहीं था। उस समय 1990 के दशक तक सेवाओं में अधिक व्यापार नहीं होता था। किंतु विगत लगभग तीन दशकों से सेवाओं में व्यापार बहुत अधिक बढ़ गया है। GATS के अंतर्गत सेवाओं में चार प्रकार के व्यापार सम्मिलित हैं। वे निम्न हैं :

प्रथम प्रकार – सीमा पार पूर्ति– IT एवं काल सेंटर सेवाओं की USA, EU या अन्य देशों को भारतीय पूर्ति, सेवाओं की सीमापार पूर्ति का एक अच्छा उदाहरण है।

द्वितीय प्रकार – विदेशों में उपभोग– जैसे पर्यटन एवं अंतर्राष्ट्रीय घटनाएँ जैसे ओलिंपिंक या क्रिकेट या विश्व कप फुटबाल इत्यादि।

तृतीय प्रकार – व्यावसायिक उपस्थिति : इसके अंतर्गत पूर्ति करने वाली कंपनी सेवाओं की पूर्ति के लिए विदेश शाखा स्थापित करती है जैसे बैंक (भारत में सिटी बैंक या स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक या यू.एस.ए. में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया या बीमा कंपनी (भारत में लोम्बार्ड)।

चतुर्थ प्रकार – निगमित व्यक्ति से भिन्न 'वास्तविक' व्यक्ति की उपस्थिति सरल भाषा में इसे प्रवास कहा जाता है।

6) **BPO Services- व्यवसाय प्रक्रिया बहिर्स्रोतीकरण सेवाएँ** : इससे अभिप्राय एक देश से दूसरे देश को विभिन्न व्यवसाय संबंधी सेवाओं के बहिर्स्रोतीकरण से होता है। सुप्रसिद्ध 'कॉल सेंटर' के उपभोक्ता सेवाओं, आवेश प्राप्त करने एवं शिकायतों को निबटाने के कार्य BPO के उदाहरण हैं। वे विश्व अन्य स्थानों पर स्थित कंपनियों की संबंधित काल सेंटर से प्रारंभ होकर लेखा, टिकटों की बुकिंग वेतन सारणी के प्रबंधन जैसी अनेक व्यावसायिक सेवाओं तक को सम्मिलित कर लिया है।

7) **प्रेषण धनराशियाँ** – यह एक स्थान पर कार्य करने वाले प्रवासियों द्वारा कहीं अन्य स्थान पर निवास करने वाले अपने परिवारों के लिए भेजी गयी मुद्रा की मात्राएँ होती है। प्रेषण धनराशियाँ घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों हो सकती है। प्रवास में वृद्धि के कारण घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनो प्रेषण धनराशि की स्थिति में वे केवल अपने परिवारों का पालन-पोषण ही नहीं करते बल्कि वे देश में बहुमूल्य विदेशी विनिमय भी लाती है। भारत के व्यापार संतुलन में घाटा अन्य देशों में कार्य करने वाले अनिवासी भारतीयों की प्रेषण धनराशियाँ द्वारा लगभग पूर्ण रूप से पूरा हो जाता है।

8) **बौद्धिक संपदा अधिकार – IPR** : इससे अभिप्राय मस्तिष्क के सृजन के स्वामित्व से होता है जो किसी प्रौद्योगिकी, अन्वेषण एवं आविष्कार, संगीतमय, साहित्यिक, कलाकृति शब्द एवं चिन्हों से संबंधित हो सकते हैं। बौद्धिक संपदा का विचार दो-तरफा है। एक ओर तो लेखक या सृजनकर्ता के नैतिक एवं आर्थिक अधिकार को व्यक्त करना तथा दूसरी ओर नवीन कार्यों के सृजन के लिए प्रेरणा प्रदान करना एवं अन्वेषणों एवं आविष्कारों को प्रोत्साहित करना होता है। जब एक व्यक्ति या निगम को किसी अन्वेषण या आविष्कार का उपयोग करने का एकमात्र अधिकार, माना कि किसी नई औषधि तो उस उत्पाद की एकाधिकारी कीमत हो सकती है। यह ऊँची कीमत एवं इस प्रकार अर्जित अतिरिक्त लाभ से नवीन ज्ञान एवं आविष्कारों को प्रोत्साहन प्रदान करने की आशा की जाती है। किंतु ज्ञान एक सार्वजनिक वस्तु है जिसका अर्थ यह होता है कि एक व्यक्ति द्वारा इसका उपभोग किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसके उपभोग को कम नहीं करता है उदाहरण, एक विद्यार्थी की अर्थशास्त्र की पढ़ाई किसी अन्य व्यक्ति के अर्थशास्त्र

के ज्ञान में कमी नहीं करती है। इसके विपरीत यह तर्क दिया जा सकता है कि अर्थशास्त्र या किसी अन्य बात का ज्ञान जितने अधिक लोगों को होगा उतना ही अधिक केवल प्रसार की ही नहीं बल्कि ज्ञान में वृद्धि की संभावना होती है। परिणामस्वरूप, अन्वेषणों, आविष्कारों के लिए प्रोत्साहन एवं ज्ञान के प्रसार के बीच विरोध की स्थिति होती है। HIV/AIDS के कैंसर का इलाज करने के लिए औषधियों की बहुत अधिक कीमतों के कारण बड़ी संख्या में लोगों की ऐसी अक्षमता उत्पन्न हो सकती है कि वे इलाज का व्यय वहन न कर सके। जनस्वास्थ्य या चिकित्सा संबंधी आपातकाल की ऐसी स्थिति में WTO में यह नियम बनाया गया है कि प्रभावित देश अनिवार्य लाइसेंस व्यवस्था या प्रजातीय (generic) उत्पादन के लिए आग्रह कर सकते हैं।

9) **क्षेत्रीय व्यापार** – इसका अभिप्राय एक क्षेत्र के अंतर्गत व्यापार से होता है जैसे यूरोप या एशिया या एशिया के एक भाग में व्यापार। क्षेत्रीय व्यापार से प्रायः क्षेत्रीय स्वतंत्र बाजार समझौते (RFTAs) उत्पन्न हुए हैं। एक RFTA का सर्वोत्तम उदाहरण यूरोपीय संघ है जिसके अंतर्गत सभी व्यापार तटकर एवं नियंत्रणों से स्वतंत्र है। दक्षिण पूर्व एशियाई देशों का ASEAN आसियान स्वतंत्र व्यापार समझौता है। RFTAs के तत्त्व अतिरिक्त एक यह भी मामला है कि क्षेत्रीय व्यापार प्रायः अनौपचारिक सीमापार प्रकार का होता है। बहुत लंबी थल सीमाएँ होने के कारण कई वस्तुएँ जैसे भारत एवं बांग्लादेश के बीच व्यापार की जाती हैं तथा इस व्यापार का अधिकांश भाग सरकारी आँकड़ों में प्रविष्ट नहीं होता है। अब अधिकांश क्षेत्र या उपक्षेत्र FTAs (स्वतंत्र व्यापार क्षेत्रों) में सम्मिलित है। यह एक दूसरे के बाजारों को प्राप्त करने में पैमाने की मितव्ययिताओं का उपयोग करने के लिए अर्थव्यवस्थाओं को क्षमता प्रदान करती है।

20.10 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) भाग 20.3 देखें

2) भाग 20.3 देखें

3) खंड 20.4 देखें

बोध प्रश्न 2

1) उपभाग 20.4.1 देखें

2) उपभाग 20.4.2 देखें

3) उपभाग 20.4.2 देखें

4) उपभाग 20.4.3 देखें

5) उपभाग 20.4.3 देखें

बोध प्रश्न 3

1) उपभाग 20.4.4 देखें

2) उपभाग 20.4.5 देखें

3) उपभाग 20.5.3 देखें

4) उपभाग 20.5.3 देखें।